श्री जानकीवल्लभाय नमः
श्रीमन्मारुतनन्दनाय नमः
श्रीमद्रामानन्दाचार्याय नमः

श्री जयपुर गलतागाद्याधीश्वर श्री सीताराम रसिकाचार्य अनन्त श्री स्वामी मधुराचार्य महाराज प्रणीता—

श्री माधुर्यकेलि कादम्बिनी

भावबोधिनीं टीकाकार
श्री भट्टप्रदेव वंशावतंश

श्री श्री १०८ श्री स्वामी सियाशरणजी महाराज मधुकरके श्री चरणकमलभ्रमर जानकीशरण मधुकर श्री चारुशीलामन्दिर श्री चारुशीला बाग श्री जानकी घाट श्री अयोध्याजी

प्रकाशक :—
श्री मैथिलीशरणजी
एवं
श्री मदनलाल चितलांगिया
४०, स्ट्रांड रोड, कलकत्ता-७

अर्थ :—मनरमणीय गर्मजल से भरे हुए कुंडादि भवरों के स्वर के कल्लोल से पक्षियों के भी नृत्य कल्लोल से गूँजित जल विहार की नौकाएँ अनेक प्रकार के मन्दिरों से शोभित हैं ॥ ३९९ ॥

सर्वतो रत्न सौधानि मणि हेममयानिच।
धारा गृहाणि मुक्तानां तप्त निर्झर वारिभिः ॥४००॥

अर्थ :—चारों तरफ रत्नमय, सुवर्णमय, मणिमय महलों की पंक्ति कहीं पर धारा गृह्य और गर्म जल के फुहारों से बने हुए तथा मुक्ता गृह्य ॥ ४०० ॥

धारा गृहाण्येव मनोहराणि सुधांशु कर्पूर निभानिकानि।
सहस्र लक्ष्यायुत चार्बुदानि धाराभिराच्छादित काननानि ॥४०१॥

अर्थ :—मनोहर जल की धाराओं के महल जो चन्द्रमा और कपूर के समान क्रमशः प्रकाशमान और सुरक्षित हैं ऐसे हजारों, लाखों, करोड़ो, अरबों महल बहुत से जल फुहारों से ढके हुए अनेक प्रकार के महल तथा बन हैं ॥ ४०१ ॥

श्रीमत्सरय्वा जल पूरितानि सुगन्ध पुष्पैश्च सुवासितानि।
मुखैस्सहस्रै रूप लक्षितानि कुंजानि चित्राणि नवाम्बुदानि ॥४०२॥

अर्थ :—ये सब फुहारें श्री सरयूजी के जल व पुष्पों की सुगन्ध से सुगन्धित चित्र-विचित्र कुंजों में नवीन अद्भुत मेघ की तरह से हजारों मुख से बरसते हुए दीखते हैं ॥ ४०२ ॥

शब्दैरनेकैरनुभान्ति वाद्यैः कलरवनैः कुक्कुट वर्हिणाञ्च।
धारा निपातैश्च समुत्सुकानां सखीगणानां मृदुराग गायनैः ॥४०३॥

अर्थ :—जल कुकुट, मोर तथा अत्यन्त उत्साहपूर्ण सखियों के मृदुरागपूर्ण गान और बाजों की आवाज से अनेक प्रकार की जल धाराओं के गिरने से अनेक प्रकार के शब्दों का अनुभव इस स्नान कुंज में हो रहा है ॥ ४०३ ॥

बर्षन्ति सीकरा नालिर्झरा रम्यशिलासु च।
कर्णानि वसुधायास्तद्रूप हृष्टो नभो मुदे ॥४०४॥

अर्थ :—वर्षा की जल बून्दों से तथा नालों में पत्थरों के टकराने से और पृथ्वी के रंग के इस रूप सौन्दर्य से आकाश और कान आनन्द से भर गये ॥ ४०४ ॥

रामो दीव्यति सस्त्रीको रम्य निर्झर वारिषु।
सीकरा वदने भान्ति विविधा वसुधा कणाः ॥४०५॥

अर्थ :—इस प्रकार की रमणीय शोभा में जल के झरनों के भीतर पत्नियों के सहित श्रीरामजी अद्भुत प्रकाशमान सुशोभित हो रहे हैं। मुखचन्द्र में जल के शीकर झलक रहे हैं। रंग बिरंग की भूमि में अनेक प्रकार की जल की शोभा हो रही है ॥ ४०५ ॥

कापि प्रियस्य जग्राह कंठं चारु तरा नना ।
पीनस्पष्ट कुचाक्रान्ता निमज्जात भयादिव ॥४०६॥

अर्थ :—हे सुन्दरानने कोई प्रीतम के कंठ को पकड़ी हुई प्रीतम द्वारा पुष्ट बक्षस्थल से आक्रान्ता है, हमको कोई देख न ले इस भय से मानों जाल में छिप गयी ॥ ४०६ ॥

चुचुम्ब कापि तद्वक्त्रं मन्त्र व्याजेन सुन्दरी ।
निधाय कापि तत्स्कन्धे बाहुं मंजु कलं जगौ ॥४०७॥

अर्थ :—कोई सुन्दरी मन्त्र सुनाने के बहाने से प्रीतम के मुख को पकड़कर चूमती है। कोई प्रीतम के कन्धों पर भुजा डालकर सुन्दर स्वर मिला कर गारही है ॥ ४०७ ॥

विजगाहे जले काचिद् गृह्य बाहुं सुबाहुना ।
जलयन्त्रैः प्रियंकाचिच्छिषि चे मदविह्वला ॥४०८॥

अर्थ :—कोई प्रिया अपनी सुभुजा से प्रीतम की बाँह को पकड़कर जलधारा को पार कर रही है। कोई प्रेममद विह्वला प्रिय को जल-यन्त्रो से सींच रही है ॥४०८॥

चन्द्राननेऽलकाकीर्णाः मञ्जु सीकर चारवः ।
रान्ति भोगि सुता रत्नं शंके पीयूष लालसाः ॥४०९॥

अर्थ :—प्रीतम के मुखचन्द्र में सुन्दर जुल्फें आच्छादित हैं और उन अलकों से सुन्दर जल के कण बिखर रहे हैं मानों अमृत के लोभ से नागिनीयाँ चन्द्रमा को रत्न दे रही हों ॥ ४०९ ॥

आगतः शशिना सार्धं शुचिर्जाने सुरत्नकः ।
मन्ये श्रृंगार हस्तीति करेण ददते मणीन् ॥४१०॥

अर्थ :—हे जाने, ऐसा जान पड़ता है कि श्रृंगार रस बहुत से रत्न लेकर चन्द्रमा के साथ आया है, अथवा श्रृंगार रस रूपी हाथी अपनी सूड़ से चन्द्रमा को मणि दे रहा है ॥ ४१० ॥

शङ्के शुचिर्नृप वराङ्कुतराज पुत्रः स्नानाय निर्झर तनुं सरसंचकार ।
कर्पूर दुग्ध सुसुधारसवारि गन्धः मुञ्चन्मुहुर्घन इवाति रसप्रवीणः॥४११॥

अर्थ :—हे सखि ऐसा बूझ पड़ता है कि अत्यन्तर सीला श्रृंगार रस अद्भुत श्री चक्रवर्ती राजकुमार होकर झरना में स्नान के लिए (अपने शरीर को) फुहारों से कपूर, धूप, अमृत रस और सुगन्धित जल इनकी धारा को मेघ की भाँति झरनों से बहाकर स्नान कर रहे हों। क्योंकि आप रसभोग के चतुर हैं। यहाँ पर अलकावली झरना है श्री विग्रह श्रृङ्गार रस रूप पुरुष हैं और उन बालों से जो जल टपकता है वही विविध प्रकार की वर्षा हो रही है ॥ ४११ ॥

प्रायोमलय वृक्ष रसं पिवन्ति पत्न्यः सुमुखि भोगिगणस्थ नित्यम् ।
कपूर गात्राः सखि सर्व गन्धा स्तदंग गन्धोत्थ मुखास्सुसात्विकाः ॥४१२॥

अर्थ :—हे सुमुखि सखि ! प्रायः सर्पों कि पत्नियाँ मलय बृक्ष के ही रस को नित्यपान करती हैं । परन्तु हे सखि । श्री प्रीतम के अंग से उत्थित जो गन्ध है उसी को पान करती हुई मानों प्रीतम के ही अंग को चन्दन बृक्ष मान कर वे नागिनियाँ सात्विक भाव से भरी हुई सुगन्धित मुख वाली हो रही हैं ।

यहाँ श्री प्रीतम ही मलयतरु और नागकन्या ही सखियाँ नागिनियाँ हैं और प्रीतम के अंग की सुगन्ध ही मलय चन्दन की सुगन्ध है ॥ ४१२ ॥

निरीक्ष्य रूपं शुभलोलनेत्राः मग्नावभुवुः किल लोकबाह्याः
आर्द्रालकान्सो धयतो नुरागात् परस्परं तौ करपङ्कजाभ्याम् ॥४१३॥

अर्थ :—दोनों प्रियाप्रीतम परस्पर अत्यन्त अनुराग पूर्वक भींजी हुई अलकावलियों को करकमलों से निचोड़ने और सुधारने लगे तो उस दृश्य को देखने वाली अत्यन्त चञ्चल नेत्रों से इस रूप की झाँकी को देख ऐसी आनन्द मग्न हुई की उनको बाह्यलोक ज्ञान ही नहीं रह गया ॥ ४१३ ॥

जाने सुधांशुं सहजं हि वैरं त्यक्त्वा सरोजानि सुपूजयन्ति ।
लीनौ प्रिये तु किल नीलपीत पटो मिथोऽङ्गानि सुविम्बितानि ॥४१४॥

अर्थ :—हे प्राणवल्लभे सखि ! मालूम पड़ता है कि कमल अपने सहज बैर को त्याग कर चन्द्रमा की पूजा कर रहे हैं । हे प्रिय सखि मानो नील और पीत वस्त्रों के भीतर दोनों सरकार प्रतिबिम्बित हो कर लीन हो गये हों ॥ ४१४ ॥

पदावभूतांकिमुदम्पतीतौ रसांगराशेः सखिभोक्तुकामौ ।
मनोहरांगच्छवि माधुरींतां निरीक्ष्यतश्चन्द्र चकोररूपौ ॥४१५॥

हे सखि अनुराग की महान पदवी को प्रकाशित करने व अंग-प्रत्यंग सर्वाङ्ग भोग करने की कामना से ही क्या इन दोनों ने दम्पत्ति का रूप धारण किया है ? जो मनोहर अंग माधुरी छवि को देख कर परस्पर चन्द्रचकोर हो गये हैं । वास्तव में दोनों एक ही तो हैं, रामसीता है, सीता राम है ॥ ४१५ ॥

बभूवतुः कापि सखी निधाय स्वांङ्के मुहुस्तद्युगलं बिलोकते ।
भुजौमृगाली सुकचास्तु शैवला दृशौ सुमीनौ वदनं हिपंकजम् ॥४१६॥

अर्थ :—कोई सखो सरोवर बन गयी और दोनों सरकार को अपनी रूपमाधुरी अंक में बुड़ाकर देखने लगी तो भुजायें कमलनाल हो गयी, मुख कमल हो गया, और शिर के बाल शेवार हो गये, नेत्र मछलियाँ हो गयीं ॥ ४१६ ॥

प्रियेनितम्बस्तु शिलातलोऽस्ति कुचौसुकोकौ सलिलं स्वरूपम् ।
लावण्य-भंङ्गो बनिता सरोऽस्ति तत्स्तान शुद्धःसखि भाति रामः॥४१७॥

अर्थ :—हे प्रिय सखि! स्त्रियाँ तो तालाब हैं। उनकी सुन्दरता, सुकुमारता और लावण्यता ही लहरें हैं। और उनके नितम्ब ही सरोवर में कूदने का पत्थर चट्टान है। बक्षोज चकवा चकवी हैं, रूप सौन्दर्य सरोवर का जल है। हे सखि उस सरोवर में स्नान करने से श्री रामजी शुद्ध हो गये अत: वे अब बहुत अच्छे पुण्यात्मा हो गये॥ ४१७॥

सख्य:सुके शान् मृदु साधयन्ति स्वारोप्य किम्बा रस जाल मारात्।
मनोमय जालं बिधाय सम्यक् प्रशार्य्य लोके विविधाऽछरौधान्॥४१८॥

अर्थ :—सखियाँ प्रियाप्रीतमजी के शिर के कोमल बालों को कंघी से सुसज्जितकर रहीं हैं। मानों प्रीतम ने अपने समीप में श्रृङ्गार रस का जाल बिछा रखा हो, अथवा मनोजमय जाल बिछा रखा हो, अथवा विविध प्रकार के काम के वाणों को लोक में फैला रखा हो॥ ४१८॥

शौचामज्जनवस्त्रयावककचधुत्यंग रागामलः,
श्रीमद्भूषणबृन्दमंजुवदन श्रीगन्धरागैः प्रिये।
श्रीनेत्राञ्जन चारुहास्य वचनैर्गत्यालि संभूषितौ,
पातिव्रत्य कटाक्ष वृन्द पटलैश्चातुर्य्यकैर्दम्पती॥४१९॥

अर्थ :—हे प्रिय सखि। दोनों सरकार को सखियों ने दन्तधावन, तेल, उबटन, स्नान, वस्त्र, महावर, चोटीगूथना, अंग राग लेपन, निर्मल प्रकाशमान भूषण समूह, मुखचन्द्र में तिलक, सुगन्धित पदार्थ इत्तर चन्दनादि, नेत्राञ्जन, महावर आदिक रागों से सुन्दर श्रृंगार करके फिर अपनी सुन्दरगति चाल से अपनी पातिव्रत धर्मानुकूल चातुरी के हास्ययुक्त वचन और कटाक्ष वृन्दों से पूर्ण श्रृंगार किया॥ ४१९॥

इत्थंश्रीनृपराजराजतनया वन्योन्य जीवातुकौ,
श्रृंगारैर्नवसप्तभिर्विलसितौ संवीक्ष्य संवीक्ष्यच।
एकैकाङ्गकलासुनारिनयना मज्जन्ति नीव्योमुहु,
विस्रंसन्ति सम्मचलन्ति सुकचा रोमाञ्चमुज्जृम्भते॥४२०॥

अर्थ :—दोनों राजेन्द्र कुमार कुमारी सोलहों श्रृङ्गार से सुसज्जित होकर परस्पर एक दूसरे को देखते हुए एक के लिये एक परस्पर सजीवनी बूँटीवत् हो रहे हैं। इन दम्पति के परस्पर एक-एक अंग की सौन्दर्य कला समूह रूपी अमृत सागर में नारियों के नेत्र बूड़ जाते हैं उनकी नीवि बारम्बार शिथिल हो जाती है, वस्त्र खुल-खुल जाते हैं, शिर की वेनी बिखर जाती है, शरीर में रोमांच हो जाते हैं और वे जमुहाई लेती हैं। सब सात्विक दशायें उत्पन्न हो जाती हैं॥ ४२०॥

शिरसिचन्द्रिकाभालभूषणम् सुकच पट्टिका रत्न गुम्फिता।
सुतन्तु रञ्जिता नील शाटिका सुमुखि कामिता भाति नीविका॥४२१॥

अर्थ :—हे सुमुखि ! श्री किशोरी जी के शिर में चन्द्रिका झलके बन्दी, वेंदा आदि भूषण, सुन्दर अलकावलियों में रत्नगुंफित स्वर्ण पट्टिका और गौर श्रीविग्रह में नील साड़ी रत्नों की कर्धनी से अत्यन्त सुशोभित नीवी मन को आकर्षित करती है ॥ ४२१ ॥

सुगिरिमस्तके मेघमालिका किमु सुचन्द्रिका चन्द्र धञ्चिता ।
शुचिविहारिका रात्रिपुंजिका सविधुखण्डिका राग रञ्जिका ॥४२२॥

अर्थ :—माथे पर चन्द्रमा के प्रकाश को भी तिरोभूत करनेवाली प्रकाशमान चन्द्रिका, अलकारूपी मेघ मण्डल के ऊपर कैसे शोभित हो रही है, मानो रात्रि के अन्धकार के पुञ्ज के ऊपर अति अनुराग से अनुरागित कोई विलक्षण चन्द्रमा के खण्ड सुवर्ण शिखर के ऊपर शृंगार रस समुद्र में तैर रहे हों। यहाँ नील साड़ी शृंगार रस समुद्र है और चन्द्रिका चन्द्र खंड है और श्री किशोरी जी का श्रीविग्रह ही स्वर्ण पर्वत है ॥ ४२२ ॥

सुपतिपाशिका रत्नगुम्फिता सखि विहारिका सूरकन्यका ।
विधुसमाकुलाहंस मण्डिता किमुमुदेस्तुनो सर्वदा स्वयम् ॥४२३॥

॥ श्री प्रियाजु के शिर में मणिमोती रत्न जड़ित नील साड़ी का वर्णन ॥

अर्थ :—हे सखि ! दोनों किनारे रत्नों से निर्मिता बीच धारा में चन्द्रभाओं की भीड़ बीच-बीच में तारामण्डल को वहा कर अपने प्रीतम के लिये सुखमय जाल बिछाई हुई क्या यह सूर्यकन्या श्री जमुनाजी तो स्वयम् हम लोगों को हमेशा सुख देने को आई है ? ॥ ४२३ ॥

सशिशुमारकः सोडुकोविधुः किमु सुसेवते जानकी मुखम् ।
शिवख सिन्धुषूष्यात्रदक्षिणःसुमुखि लांछनंत्यकुमिच्छति ॥४२४॥

अर्थ :—श्री प्रियाजी के मस्तक में बिन्दी और माँगलर तथा चन्द्रिका तीनों के रूपक का वर्णन है कि शिशुमार और तारामण्डल के सहित बीच में यह चन्द्रमा श्री प्रियाजी के श्रीमुख की सेवा करने आया है ? मानों चन्द्रमा को शिवजी के मस्तक में और आकाश में तथा समुद्र में रहने से कहीं पर भी कलंक नाश नहीं हुआ तो हे सुमुखि, बहुत होसियार यह चन्द्रमा अब प्रियाजी की शरण में आकर अपनो कलंक को त्यागना चाहता है। चद्रिका चन्द्रमा है माँगलर शिशुमार है बिन्दी के मोती हीं तारामण्डल हैं ॥ ४२० ॥

कमलनेत्रक भ्रूसुकुन्तलाः सखिसुनासिका भाति मञ्जुला ।
किमु सरोजयोः षट्पदावलिः सपदियुद्धयते कीर वारिता ॥४२५॥

अर्थ :—हे सखि श्री प्रियाजी के मुखचन्द्र में कमल सदृश दो नेत्र ऊपर में सुन्दर भृकुटी दोनों कपोलों के पास सुन्दर अलकाबली, नाशिका में नासामणि अत्यन्त ही सुन्दर लग रहे हैं, मानों दो कमलों के दोनों तरफ भँवरों की भीड़

युद्ध कर रही हो और ताता उनके झगड़ों को छुड़ा रहा हो ॥ ४२५ ॥

सुमणि भूषणं कम्बु कण्ठके पदिक मौक्तिकं काच भूषणम् ।
लसति दैवतैः किमु यमश्वसा सरवि चन्द्रमा मेरु सेवते ॥४२६॥

अर्थ :—संख-सदृश कंठ में नीलमणि की गलपोती और भी सुन्दर मणियों की चम्पाकलि, चन्द्रहार, पदिकहार, मोतियों के हार, मुक्ताओं के हार, अत्यन्त सुशोभित हैं, मानों श्री यमुनाजी सूर्य चन्द्र आदि देवों के साथ सुमेरू पर्वत पर शोभित हो रही हो। यहाँ नील गलपोती यमुना, कानके तरवन और चन्द्रहार आदि, सूर्य चन्द्रादि देवता हैं। श्री किशोरी जी के श्रीविग्रह सुमेरू पर्वत है और कण्ठ शिखर है ॥ ४२६ ॥

सुमुखि कर्णयो रत्नफुल्लकौ किमुवृषस्थकौ भानुमण्डलौ ।
मदनभूपतेश्चर्मणीकिमु विलसतः सूगण्डातपत्रकौ ॥४२७॥

अर्थ :—हे सुमुखि ! श्री प्रियाजी के दोनों कर्ण में रत्नों के फूल क्या वृषराशि के ये दो सूर्य मण्डल है। अथवा मदन रूपी महाराज की दो ढाल स्वरूप कपोलों के शिखर छत्र शोभित हैं ? ॥ ४२७ ॥

उरसिहारकं भाति लम्बितम् सवनमालया कञ्चुकी शुभा ।
किमुवियत्सरिच्छ्री शिवोपरि कुशुमपङ्कजैःशैवलैःसह ॥ ४२८ ॥

अर्थ :—श्री प्रियाजी के बक्षस्थल में नील कंचुकी के ऊपर हृदय में मोतीहार बनमाला अत्यन्त प्रकाशित हो रहे हैं, मानों शिवजी के ऊपर आकाश गंगा सिवार और कमलों के सहित बहकर आई हो। यहाँ बक्षस्थल शिव, नील कंचुकी शिवार हैं, मोतीलर आकाश गंगा है और पदिक हारबन माला कमल हैं ॥ ४२८ ॥

सरसवेणिका भाति गुम्फिता शुमणि मौक्तिकैः पुष्पसंचयैः ।
नृपशुतस्य किं सुत्रिवेणिका सुरति वर्धिनी पाप मोचिनी ॥ ४२६ ॥

अर्थ :—श्री किशोरीजी की रसीली चोटी विविध प्रकार की मणि मोती और सुन्दर पुष्पों से गुंथी गयी है ऐसा लगता है कि मानों महाराज कुमार के सुन्दर अनुराग को बढ़ाने के लिये और उन स्वतन्त्रतारूपी पाप को छुड़ाने के लिये यह सुन्दर त्रिवेणी है, जहाँ स्नान करने से श्री प्रियाजी के आधीन हों रहेंगे ॥ ४२९ ॥

मृदुल भुजलता भूषणान्विता नृपसुतस्य कंठोपरिस्थिता ।
शुरति रोपिता मन्मथा किमु भुवनकामिता दातुमुत्शुका ॥ ४३० ॥

अर्थ :—हे सखि ! श्री प्रियाजी की सुभूषित कोमल भुजलता श्री राज राजेन्द्र कुमार के कंठ के ऊपर कैसे सुशोभित है, मानों सारे ब्रह्माण्ड के मनोरथों को पूर्ण करने के लिये उत्सुक हुई रति कामदेव को बाँधी हुई हो ॥ ४३० ॥

सितमणि स्फुरद्भूषणैः शुभै विलसितौकरौ सारसोपरि ।
मधुप संहतिनृत्यति स्फुटं किमु मुदान्विता गान कोविदाः ॥ ४३१ ॥

अर्थ :—नीलमणि की अँगुठी आदि अनेक भूषणों से भूषित श्री प्रियाजी के कर कमल ऐसे सुशोभित है, मानों संगीतज्ञ भँवरों के झुँड आनन्दमग्न होकर कमलों के ऊपर नृत्य कर रहा हो ॥ ४३१ ॥

सुकरयोः प्रिये मौक्ति स्रजौमृदु तरांगुली मुद्रिका किमु।
सुमुखि सेवते कौमुदी युतः सरसिजं तमस्त्यज्य सोमकः ॥ ४३२ ॥

अर्थ :—हे प्रिय सखि! श्री किशोरीजी के सुकोमल करकमलों में पान व मुद्रिकाओं से जुटी हुई मोतियों की लड़ ऐसे लग रही हैं, मानो चन्द्रमा अन्धकार को त्याग कर अपनी कोरणों सहित कमल की सेवा करने के लिये आया हो। यहाँ अँगुठी के नील नग अन्धकार हैं, अंगुठी व पान चन्द्रमा है, मोतीलड़ किरण है और हाथ कमल है, चन्द्रमा का कमल से विरोध त्यागना अन्धकार को त्यागना है॥ ४३२ ॥

सुकर रेखिका गन्ध तल्पिका सुपतिचुम्बिता भाति मन्यते।
ससखि वाचयत्यात्मनः परं विधिमहो पुनस्तां सुजिघ्रति ॥ ४३३ ॥

अर्थ :—श्री प्रियाजी के करकमलों की जो ललित रेखायें हैं वे सुगन्ध के पर्यङ्क है, रसीले प्रीतम द्वारा सुचुम्बित है, हे सखि! ऐसे जान पड़ता है कि प्रीतम अपने सुख की विधाता मानकर हाथ देखने वाली सखियों से उन रेखाओं को पढा कर फिर स्वयं सूघंते हैं और अपने को बड़भागी मानते हैं ॥ ४३३ ॥

शुचिसरोवरोद्भुत निम्नगा सुपति मानसं स्नातुमागता।
किमुसुमन्दिराट्टालिकानवा मदन भूपति क्रीड़िता मुहुः ॥ ४३४ ॥

अर्थ :—श्रृङ्गार रस सरोवर से उद्भूत उदरस्थ रोम राजी रूपीनदी मानो श्री प्रीतम के मनरूपी महाराज के स्नान के लिये आई हो, जिसमें प्रथम मदन महाराज बार-बार स्नान किये हैं और उस नदी के दोनों तट पर अनेक प्रकार के नये नये मन्दिर अट्टालिकाएँ हों यह बक्षस्थल के रूपक हैं ॥ ४३४ ॥

सुतनुसुन्दराधः पटंनवं रसनयाद्भुतं भाति नाद्दितम्।
किमुसुरालयं रत्नकाम्यया सखिगताश्रयं राजहंसकाः ॥ ४३५ ॥

अर्थ :—हे सखि। अद्भुत नवीन कमर करधनी की किंकिणियों से गुँजित श्री प्रियाजी के कमर की नील साड़ी अत्यन्त सुशोभित हो रही है, मानों राजहंस अनेक रत्नों की कामना से स्वर्ग में जाकर स्तुति पूर्वक आश्रयण कर रहे है।।४३५।

रसमयाद्भुताबूरुयुग्मकौकिमुमनोभवस्तम्भकौ नवौ।
सुपतिवारणस्वान्तबन्धनं विलसितः स्फुटं क्रतुमुघतौ ॥ ४३६ ॥

अर्थ :—अद्भुत सुन्दर रसमय दोनों जंघायें मानो कामदेव के दो नवीन स्तम्भ हो, मानो रसीले पति के मनरूपी मत्तगज को बाँधने के लिये ही उपस्थापित किये गये हों जो अत्यन्त प्रकाशित हो रहे हैं ॥ ४३६ ॥

लसतिसत्रिवल्यंग सत्तटामदननिम्नगा श्वासवीचिका।
किमुसुनाभिका वर्तरंजिता शुचिसुरूपका ग्राहर्भातिका ॥ ४३७ ॥
अर्थ :—श्रीप्रियाजी के उदर की त्रिबली रेखारूप कामदेव की नदी श्वांस रूपी तरंगों से तट तरंगित हैं। नाभीरूपी भँवर से शोभित अद्भुत सौन्दर्य रूपी ग्राह से प्रीतम के मन को खींचनेवाली कहीं किशोरी जी मान न कर जाएं अतः भयानक हैं ॥ ४३७ ॥

सुतनुरोम सौराजशैवला कुच सुचक्रवाकान्वितामला।
सुरसनाद्भुता रत्नमीनिका प्रियमनो गजानन्दकारिका ॥ ४३८ ॥
अर्थ :—फिर श्री विग्रह के रोमावली रूपी शेवार से और बक्षस्थल रूपी निर्मल चकवा चकवी से अद्भुत सुन्दर कमर करधनी के रत्न रूपी मछलियों से और श्री प्रीतम के मनरूपी मतवाले गजेन्द्र के स्नान के लिये श्री प्रियाजी का श्री विग्रह गम्भीर नदी है ॥ ४३८ ॥

सरसजानुनी कामयन्त्रकौ किमुसुजंघकौ कोमलौशुभौ।
किमुसुकेतकी कोरकौ सखि किमुनिषंगकौ मार भूपतेः ॥ ४३९ ॥
अर्थ :—अत्यन्त सुन्दर जानुनी (घुठने के नीचला भाग) और सुकोमल जंघा ये दोनों क्या काम के यन्त्र हैं अथवा केतकी की दो कलियाँ हैं ? अथवा काम के दो तूणीर हैं ? जो अत्यन्त सुन्दर हैं ॥ ४३९ ॥

सखि सुगुल्फकौ नूपुरान्वितौ कटकमण्डितौ शोभितौकिल।
कलरवाद्भुताश्चित्र भित्तिको परि पठन्तिकिं नारिदिग्जयम् ॥ ४४० ॥
अर्थ :—हे सखि! सुन्दर नूपुर और कड़ों से भूषित चरणों के गुल्फ उनके चलने में मनोहर आवाज करते हैं सो जैसे अद्भुत चित्रकारी युक्त दिवाल पर कलहंस स्त्रियों की दिग्गविजय को पढ़ रहे हों। यहाँ महावर युक्त चरण ही चित्रित दिवाल है ॥ ४४० ॥

प्रिय मनोगजालीनकौ किमु कमल दण्डकौ हंसवृन्दकः।
सुमुखि सेवते चारुनादितो मधुनिपीय किं संस्पृहोमुहः ॥ ४४१ ॥
अर्थ :—हे सुमुखि। प्रीतम के मनरूपी मदमत्त गजेन्द्र को बाँधने के लिये श्री प्रियाजी के चरणों के नूपुर क्या जंजीर हैं अथवा नूपुर रूपी हंसों के समूह मधु का पान कर पुनः पीने के लिये सुन्दर गुँजार करते हुये कमलनाल की सेवा करते हैं। चरणों से ऊपर का भाग रूपी कमलनाल है ॥ ४४१ ॥

सुजतुरंजितं पादपंकजं सुमुखिराजते हंसकैर्वृतम्।
नखमणि स्फुरत् कान्तिसम्भृतं चरणपत्रकैः सुष्ठुसज्जितम ॥ ४४२ ॥
अर्थ :—हे सुमुखि ! महावर की सुन्दर रचनायुक्त श्री प्रियाजी के चरणकमल की अँगुली की नखमणि चन्द्रिका की दीप्ति, नूपुरों के गुँजार मानों कलहंस सदृश

आवाज है और सखियों द्वारा अनेक प्रकार के चित्र पत्र रचना युक्त चरण अत्यन्त मनोहर हैं ॥ ४४२ ॥

कमलतल्पके चन्द्रमाःकिमु सयनमालिकि कृत्य सादरम् ।
सहजमात्मनों वैर सन्तति त्यजति बन्दनां कुर्वते मुहुः ॥ ४४३ ॥

अर्थ :—हे आलि ! श्री प्रियाजी के चरणकमल के नूपुरयुक्त अँगुलियों की नख-मण्डली ऐसी प्रकाशित हो रही है मानों चन्द्रमा ने अपनी सहज बैर की परम्परा को त्याग कर कमल को अपना पर्यङ्क बना लिया हो और आदर करता हुआ बारम्बार बन्दना भी करता हो ॥ ४४३ ॥

इतिसुमण्डिता भाति सुन्दरी हरति मानसं नैव मुंचति ।
हँसति वीक्ष्यते चाटुवक्ति च द्वश मथात्मनो कुर्वते किल ॥ ४४४ ॥

अर्थ :—इस प्रकार अत्यन्त सुन्दरी श्री प्रियाजी श्रृंगारयुक्त प्रकाशमान होकर प्रीतम के मन को हरण कर रही हैं, छोड़ती नहीं, वे जब हँस की कटाक्ष पूर्ण दृष्टि से देखती हैं और कुछ चुटकीले बचनों को बोलती हैं तो सब समाज की आत्मा को कैसे तो वश में कर लेती हैं ॥ ४४४ ॥

॥ श्री प्रीतमजू के श्रृङ्गार का वर्णन ॥

शिरसिपट्टिका रत्नभूषण मरूणमंञ्जुलं शिर्षवेष्टनम् ।
किमुतमालके भौमसंयुतो लसतिखं परित्यज्य चन्द्रमाः ॥ ४४५ ॥

अर्थ :—श्री प्रीतम के मस्तक में लाल रंग है जिसमें श्वेत पट्टिका और विविध प्रकार की मणियाँ बड़े कलापूर्ण ढंग से जड़े गये हैं ऐसा लगता है मानों मंगल के सहित चन्द्रमा आकाश को त्याग कर तमाल वृक्ष के ऊपर बैठा हो ॥ ४४५ ॥

रूचिरभालकं भ्रू युगं तति तिलकरेखिका भातिचित्रिका ।
किमुसितोत्पले ग्वाशुसज्जितं मदन भूपते र्बाणयुग्मकम् ॥ ४४६ ॥

अर्थ :—हे सखि । सुन्दर भाल पर दो भृकुटियों के उपर से तिलक की दो रेखायें अत्यन्त चित्रकारिता के साथ ऊपर को गयी हैं ऐसा लगता है कि काम-देव ने नीले चट्टानों के ऊपर दो धनुष और बाण सजकर तैयार किये हों । भृकुटी धनुष, केशर तिलक दो वाण कपोल नीलमणि की चट्टान और नेत्र ही कामदेव है ॥ ४४६ ॥

सुमुखि विस्तृता भांति कुन्तला नयन पंकजा वजनाञ्चितौ ।
मधुलिहोविधौ पुष्करौ स्फुटौ किमुर्व्वाविस्मितौ वीक्ष्य मौनिनः ॥ ४४७ ॥

अर्थ :—हे सुमुखि ? श्री प्रीतमजी के मुखचन्द्र में दो नेत्र अञ्जन युक्त और कपोलों पर आच्छादित घुँघराले जुल्फ ऐसे सुन्दर लग रहे हैं मानों भ्रमरों की भीड़ चन्द्रमा रूपी सरोवर में प्रस्फुटित दो कमलों को देख चकाचौंध में पड़कर मौन हो गयी ॥ ४४७ ॥

सुचि सुकर्णयोः रत्नकुण्डले सितगिरिस्फुरत् प्रस्तरोपरि ।
किमु कलापिनौ मन्मथान्वितौ विरुतमद्भुतं नृत्यतः विल ॥ ४४८ ॥

अर्थ :—प्रीतम के सुन्दर दोनों कानों में रत्नों के कुण्डल कपोलों पर ऐसे सुशोभित हो रहे हैं, मानों नील पर्वत शिखर पर नील पत्थर की चट्टान में दो काम के मयूर मदन के सहित बिना कल्लोल के ही अद्भुत नृत्य कर रहे हों । श्री प्रीतम ही कामदेव हैं, कुण्डल मयूर, और कपोल चट्टान और मरतक नीलगिरी शिखर है । ॥ ४४८ ॥

सरसकण्ठके स्वर्णभूषणं विविधपुष्पसद्रत्नमौक्तिका ।
उरसिभाति सा पीनकोन्नते सुचिमतीनवा दाममालिका ॥ ४४६ ॥

अर्थ :—सुन्दर श्यामकण्ठ में सुवर्ण के अलंकार और अनेक रंग की पुष्प की रत्नों की मोतियों की मालाएँ पुष्ठ विशाल श्याम बक्षस्थल में अत्यन्त सुन्दर लग रही हैं ॥ ४४९ ॥

मृदुसुभूमिजा वाहुवल्लरी कुपजनीलवृक्ष्यांशकेरता ।
शुचिगिरिस्फुरच्छङ्गतो द्भुता किमु ख निम्नगा निः स्वनापतत् ॥ ४५० ॥

अर्थ :—पृथ्वी पालक महाराज कुमार के कंधे में श्री भूमिजाजी की सुकोमल भुजलता ऐसे लग रहे हैं मानों श्रृङ्गार रस रूपी नील गिरि के शिखर से अद्भुत आकाश गंगा की धारा बिना ध्वनि के हीं पृथ्वी पर आरही हों ॥ ४५० ॥

नरवरात्मज प्राण वल्लभा वसति तच्छला द्राज नन्दिनी ।
किमकुजास्मित श्रेणी सन्ततिर्जन मनांसि किं भाति वक्ष्यसि ॥ ४५१ ॥

अर्थ :—अथवा श्री महाराज कुमार की प्राणवल्लभा इस माला के ही ब्याज से कंठ से लगी हुई हों अथवा श्री प्राणवल्लभाजी के मन्द मुस्कान ही हार बन गयी हों किंवा सज्जनों के निर्मल मन ही श्री प्रीतम के गले के हार बन गये हों ॥४५१

रूचिरनासिका मौक्तिकं शुभं सरस वर्तुलं गण्डयोर्युगम् ।
सखिसुदाड़िमं श्री शुकोस्ति किं जनक नन्दिनी दर्पण किमु ॥ ४५२ ॥

अर्थ :—श्रीप्रीतमजी के दर्पण सदृश रसीले गोल दोनों कपोल और सुन्दर नासिका तथा नासामणि ऐसे हैं कि हे सखि, क्या यह श्रीजी का तोता सुन्दर दाड़िम के बीज लेकर श्री जनकनन्दनीजी के दर्पण के पास में आ रहा है ? ॥ ४५२ ॥

विलसितौ भुजा वंगदान्वितौ सुमणि भोगिनौ नारिदंशकौ ।
किमुसुभूमिजा सोपधानकौ मदन हस्तिनः किं करादूभुतौ ॥ ४५३ ॥

अर्थ :—बाँह बिजायठ के सहित प्रीतम के दोनों भुजायें ऐसे सुन्दर लग रही हैं मानों कामिनियों को डसने के लिये फन फना रहे हो । अथवा श्री भूमिजाजी के दो तकिया हों अथवा कामदेव के गज की अद्भुत दो सूंड़ हों ॥ ४५३ ॥

मदन भूपतिः प्राप्तदिग्जयः परिघ शंसमौ लोकमोहनौ।
किमु कलावती भूमिजाकृते विधिमुनिर्मिते वेलवीरुधौ ॥ ४५४ ॥

अर्थ :- अथवा सम्पूर्ण लोक को अंधकार में कल्याण दिखा कर विश्व को मोहित करने वाले कामदेव महाराज के दो परिघ तो नहीं है अथवा श्री भूमिजाजी के क्रीड़ा के लिये महाकलाकुशल ब्रह्माने सुन्दर फैलने वाली दो लताओं का निर्माण किया है ? ॥ ४५४ ॥

समणिरत्नजाम्बूनद स्फुरत् कटक चारु हस्त द्वयं ध्रुवम्।
वसति पंकज स्कन्धयो स्तडिच्चपलतां किमु त्यज्यनित्यदा ॥ ४५५ ॥

अर्थ :- श्रीप्रीतम के दोनों हाथों में जाम्बूनद स्वर्ण के कंकण सुन्दर मणिरत्नों से जड़े हुए अत्यन्त सुन्दर लग रहे हैं, मानों बिजली अपनी चपलता को त्याग कर सदा के लिये कमलों के कन्धे पर निवास कर रही हो ॥ ४५५ ॥

उदर सत्त्रिवल्यातति सखि सरस निम्ननाभीयुताद्भुता।
सुमुखि तांमुहुः किन्नपश्यति कुरुदृगुत्सवं मुञ्च्य सर्वकम् ॥ ४५६ ॥

अर्थ—हे सखि ! अत्यन्त सरस नाभि के सहित उदर की रेखा तीन त्रिवली पंक्तियों को क्यों नहीं देखती है। हे सुमुखि सब कुछ त्याग कर अपने नेत्रों के उत्सव स्वरूप नाभि के समीप की त्रिवली को देख ॥ ४५६ ॥

किमु सरिद्धि सौन्दर्य भूभृत स्त्रिपथ गामिनी कूल वीचिका।
मुखविधोः सुधां पातुमुत्कृतं जनकजा सुसोपानवर्त्मकिम् ॥ ४५७ ॥

अर्थ—हे सखि ! ये त्रिवली है अथवा सौन्दर्य रूपी गिरी के ऊपर तीनों लोकों में जानेवाली गंगा की तटवर्ती लहर हैं ? अथवा श्री प्रीतम के मुख चन्द्र रूपी चन्द्रमा के अमृत को पीने के लिये श्री जनकजाजी की सुन्दर सीढ़ियाँ हैं ? ॥४५७॥

गुरु नितम्बके पीत मंशुकं तनु कटिस्फुरद्रत्नमेखला।
किमु धनान्तरा चञ्चला स्थिरा किमुसुसुन्दरी राग सन्ततिः ॥ ४५८ ॥

अर्थ—ऊँचे नितम्बों के ऊपर सुन्दर पीताम्बरी उस के ऊपर कमर की मणिमय मेखला (करधनी) ऐसे लग रही हैं मानों मेघ के बीच में चपला स्थिर हो गयी हैं और उसके ऊपर देवांगनाएँ विविध प्रकार के रागपूर्ण गीत गारही हों ।४५८॥

सुकर रेखिका स्वंगुलीयकं नखमणिप्रभा बृन्द संभृतम्।
विवशमालि किं कुर्वते मम सुमुखि दर्शयन् मोहकं मणिम ॥ ४५९ ॥

अर्थ – हे आलि। प्रीतम के करकमलों की रेखा अंगुलियों की नख, मणि सदृश प्रकाश करने वाली हे सुमुखि, हम को क्या मन मोहक मणि दिखा कर क्या अपने अधीन कर लोगी ? ॥ ४५९ ॥

करभकोरुक द्वन्द्वमालि किं शुचि सुभूपते श्चारु मोचिके।
सुरति मन्मथा रोपितौ किमु सरससुन्दर स्तम्भकौ सखि ॥ ४६० ॥

अर्थ—हे सखि। श्री प्रीतम के दोनों ऊरु हाथी के सूंड़ की समान हैं मानो श्रृंगार रस महाराज के सुन्दर दो कदली वृक्ष हो अथवा कामदेव ने रति के मंदिर में दो रसीले स्तम्भ की रचना की हो ॥ ४६० ॥

मृदुलजानुनी जंघयुग्मकं किमु रतिस्मरोयुद्धयेषुधिः।

कनक नूपुरं रत्नरञ्जितं लसति पद्मयोः श्रीमदा तहिम् ॥ ४६१ ॥

अर्थ—श्री प्रीतम के सुकोमल जंघा और जानु ऐसे लग रहे हैं, मानो काम और रति को युद्ध में काम देने वाले दो तुणीर हों। श्री चरणों में सुवर्ण और रत्नों के नूपुर के शब्द श्रीजी के अभिमान को मर्दन कर रहे हैं ॥ ४६१ ॥

नखमणिस्फुरत् पादशाखिवाः किमुसुधाकणाः श्रीलतांकुराः।

किमुहिपितृस्वश्रुश्चारुमन्दिरे शिशुसुधांशवः स्वागतारसात् ॥ ४६२ ॥

अर्थ—श्री चरणों की अंगुलियों के नखों की पंक्ति मणियों की भांति प्रकाशित है। मानों श्रीजी के लता के अंकूर हों उनमें ये अमृत के बून्द हों अथवा यमुना जी के घर में खेलने के लिये चन्द्रमा के बच्चे बड़े प्रेम से आये हों ॥ ४६२ ॥

चञ्चला कनककुंकुंम चम्पा केतकी कुसुम पंक्तय आरात्।

रंजिता जनकजा तनुवर्णा तिष्ठते गुणिनि शुष्ठुगुणंहि ॥ ४६३ ॥

अर्थ—श्री प्रियाजी के श्री चरणों का वर्णन श्री किशोरी जी के चरण के प्रकाश के सामने बिजली सोना, कुम्कुम्, चम्पापुष्प, केतकी पुष्प आदि सब एक साथ हों तो जैसे गुणियों में गुण प्रवेश कर जाते हैं वैसे ही इन को शोभा किशोरीजी के अंग में प्रवेश कर जाती है ॥ ४६३ ॥

निर्जिता जनकराज शुताया गौरवा द्वनभरं विविशुः।

किं मानभंग अनुयान्ति सतोहि दूरमालि शरणं मरणम्वा ॥ ४६४ ॥

अर्थ—हे आलि। वे बिजली, सोना, कुमकुम आदि श्री प्रियाजी के चरण, शरण, समीप में आये तो इनकी चरण शोभा के सामने ये सब पराजित हो गये। अपनी गौरव का मान भंग जान कर शीघ्र जंगलों में चलेगये क्यों कि सज्जन लोगों का मान भंग हो जाने पर भाग जाना, अथवा शत्रु के शरण में जाना मरने के तुल्य होता है ॥ ४६४ ॥

मेघ नीलमणि केकि गलाद्या नील पंकज गणातसिकाद्याः।

राम कान्ति कलयापि रञ्जिता निर्जिताः समभवन् वनवासाः ॥ ४६५ ॥

अर्थ—इसी प्रकार मेघ, नीलमणि, मोर का गला, नील कमल, अलसी का पुष्प आदि भी श्री प्रीतमजी के अंग कान्ति की कला से प्रसन्न थे समीप में आने पर पराजित होने पर मान भंग हुआ तो सब जंगलों में भाग गये ॥ ४६५ ॥

सौवेष्यं सखि वीक्ष्य वीक्ष्य रसिकाः कामं तयो रसादरं,
निम्लोचन्ति च पक्ष्म पालि मतनु स्यन्दन्मनोवृत्तयः।
वृक्षादि भ्रमराः खग मृगगणा रूपं मुहुस्तावपि,
वृत्तिं चन्द्र चकोरयोरगमतां सम्वीक्ष्य वेषं मिथः ॥ ४६६ ॥

अर्थ —हे सखि सुन्दर श्रृंगार युक्त युगल सरकार को देख-देख कर मनोवृत्तियों को मदनदेव का रथ बना कर रसिक जन सादर मनमाना दर्शन करते हुये नेत्रों के पलक को नहीं गिराते हैं। और वृक्ष, भ्रमर, पक्षी, मृगवृन्द आदि भी इस सौन्दर्य रूपी दर्शन में तथा दोनों सरकार भी आपस में श्रृंगार सुधारते हुए एक दूसरे को देखते हैं मानों चन्द्रमा में चकोर की वृत्ति को परस्पर में दोनों प्राप्त कर गये हों ॥ ४६६ ॥

॥ कलेऊ का वर्णन ॥

स्नेहात्तौ विवशौ निरीक्ष्य चकितं तूर्णं सखि स्वाङ्कके,

दध्रेतावपि सम्मदोदय जलादर्घ्यं मिथः पाद्यकम् ।

अंगस्पर्श मिथोविधाय मधुरं सौगन्ध्य पुञ्जकिल

धूपंतं रसिक द्विरेफ निचयाः कामंपिवन्त्यादरात ॥ ४६७ ॥

अर्थ :- हे सखि श्रृङ्गार के पश्चात् परस्पर निरीक्षण से स्नेह परवश होकर दोनों सरकार परस्पर एक दूसरे को अपने अंग में बैठा कर आनन्द की बाढ़ में तरंगित हुए स्नेह के जल से, अर्घ, पाद्य करके परस्पर अंग स्पर्श रूप सुगन्ध का विधान करके धूप कर रहे हैं रसिक भक्तजन रूप भँवरों की भीड़ बड़े आदर पूर्वक इच्छापूर्ण रूप से इस शोभा रस सुधा का पान कर रहे हैं ॥ ४६७ ॥

दीपं रूप वितान मालि रचयन् माधुर्य रूपं मुहुः,

कुर्वन् माधति गायति प्रवदति प्रीत्या गिरोतिप्रियाः ।

सीताराजवरात्मजो प्यधरयोः पाना चमनं प्रार्थयन्

दत्तं स्नेहमयं मनोहर तरं ताम्बूल गुच्छं मुहुः ॥ ४६८ ॥

अर्थ :—हे आलि। श्री प्रिया प्रीतमजी परस्पर सौन्दर्य रूप के वितान तान कर फिर माधुर्य रस रूप दीप की रचना करके अत्यन्त अनुरागमय वाणि से प्रेम पूर्वक परस्पर बातें कर और मधुर गान कर आनन्दित होकर बारम्बार अधर पान रूपी आचमन कर अत्यन्त मनोहर स्नेहमय पान के बीड़े को प्रार्थना कर एक दूसरे को दिया ॥ ४६८ ॥

॥ राज भोग का वर्णन ॥

स्नेह-स्नेह शुगन्धितांग निचयोः सख्यो वभञ्जुस्तृणान्,

वीक्ष्यार्ध्यादि च कृत्य भोग निचयं सम्पाद्य तस्थुर्मुदा ।

अन्योन्यं मृदुभोजयन् रतिवशादुन्मत्तचितौ च तौ,

सम्बीक्ष्याऽशुभानना शुमुखयोर्ग्रासं ददाति प्रियम् ॥ ४६९ ॥

अर्थ :—स्नेह रूपी सुगन्धित तेल में स्निग्ध दोनों सरकार को अर्घपाद्यादिक भोग कार्यों को परस्पर किये हुए देख कर सखियाँ आनन्द मग्न होकर तृण तोड़ती हैं और भोग की वस्तु को सुन्दर थाल में लाकर रख दिया तो स्नेह परवश विभोर

चित्त हुए दोनों सरकार आपस में ही एक दूसरे को कोमलतापूर्वक भोजन कराने लगे। प्रसन्न बदना सखियों ने दोनों प्रिय के इस दृश्य को देखा तो स्वयं भी सप्रेम सुन्दर ग्रासों को दोनों प्रिय के सुन्दर मुखों में देती हैं ॥ ४६९ ॥

॥ श्री युगल सरकार के झूला की झाँकी ॥

गृहीतः सखिवीटिकां शुमधुरां स्वादूदकै र्वासितैः

राचम्याथ मनोजकार्मुक युग भ्रूवल्लि सौगन्धकम्।

आन्दोलोत्तर चारुचित्रक शय्यांतौ दोलितौ मत्तया,

सानन्दं मुखपद्मपान रतया श्रंसद्‌दुकूलश्रिया ॥ ४७० ॥

अर्थ :—हे सखि स्वादिष्ट सुगन्धित जल से आचमन करके और सखियों के ही द्वारा सुन्दर पान बीड़ा को ग्रहण कर कामदेव के धनुष सदृश भृकुटि से परस्पर स्नेह सुगन्धित होकर सुन्दर चित्रकारिता युक्त शैय्या में आनन्द विमत्त हुई सखियों से झुलाये गये दोनों सरकार को देख कर पान पाती हुई सखियों की भी आनन्द विभोरता से अंग के वस्त्र फिसलते हैं ॥ ४७० ॥

॥ श्रृङ्गार और आरती की झाँकी ॥

छत्रंकापि चलोच्च पीन शुकुचाधत्ते शशांक द्युतिं,

काचित्स्तब्धकुचा मनोज मधुरं श्रीमन्मुखाकामिनी।

लोलाक्षी व्यजनं चकोर नयने कूजत्स्फुरत्कंकणे,

भासातन्मुखचन्द्रयोः प्रमुदिते धत्तःशुभे चामरे ॥ ४७१॥

अर्थ :—हे चकोर नयनी सखि। श्रृङ्गार के बाद सिंहासन में बैठे हुए दोनों सरकार को पुष्टवक्षोजा चञ्चल नेत्रा कोई सखी चन्द्रमा सदृश प्रकाशमान छत्र दोनों सरकार को लगा कर खड़ी है। कोई कठिन बक्षोजवाली श्री युगल सरकार की श्री मुख शोभा की कामिनी मधुर मनोजमय चञ्चल नेत्र वाली दोनों को पंखा करती है। कोई प्रकाशमान गुञ्जित कंकण धारण कर दोनों सरकार के मुख-चन्द्र चकोरी सानन्द होकर सफेद चमर कर रही है ॥ ४७१ ॥

बीणां समादाय जगौ शुरूप, मखेन्दु संचार विलज्जिताब्जा।

बृक्षाः मृगाः पक्षिगणाः वयस्ये रति स्मरौ शुन्दरि संमुमूर्छुः ॥ ४७२ ॥

अर्थ :—हे समान बयस्के सुमुखि। कोई सखी हाथ में वीणा लेकर श्री प्रिया-प्रीतम के मुखचन्द्र दर्शन विलज्जित मुख वाली उस रुप की झाँकी को गा रही है। उसके गीतों को सुन कर बृक्ष, मृग, पक्षीगण, कहाँ तक कहें, रती और मदन भी विमुर्छित हो गये ॥ ४७२ ॥

जाम्बूनदांगी कलधौत पात्रे जाम्बूनदं दीप युगं विधाय।

ससर्पिषं सैन्धवगन्ध पुष्प कर्पूररा स्नाद् भुत रत्नकादीन ॥ ४७३ ॥

अर्थ :—कोई स्वर्ण सदृश प्रकाशवती सखि ने स्वर्ण की थाली में दो स्वर्ण दीपकों को घृत पूर्ण बत्ती जलाकर पुष्प कपूर राई लोन स्वर्ण रत्न भूषण वस्त्रादि आरती सजकर तय्यार किया ॥ ४७३ ॥

उत्तारयामास च दृष्टि दोषं नितम्बिनी लोल कटाक्ष पुष्पा ।
निरीक्ष शोभाम्प्रत्यंगरंग निर्मंछयामास निजं च रामा ॥ ४७४ ॥

अर्थ :—कोई सुन्दर नितम्ब वती रामाने दृष्टि दोष निवारणार्थ अपने चंचल नेत्रों से सुन्दर कटाक्ष रूपी पुष्पों की वर्षा करती हुई आरती उतारी फिर श्री युगल-सरकार के अंग-प्रत्यंग आनन्द रंगमय शोभा का दर्शन करती हुई अपने को न्यौछावर करती हैं ॥ ४७४ ॥

पुष्पांजली तास्त्रिविधैः कटाक्षैः रामासमूहाः प्रददुः प्रवीणाः ।
सुधामयं वारि सुचन्द्रकान्त पात्रेषु चोत्तार्य मुहुः पीवन्त्यः ॥ ४७५ ॥

अर्थ :—पुनः सभी चतुरी रमणी समूह सब अपनी श्याम श्वेत, अरुणार कटाक्षों से पुष्पांजली दी फिर सुन्दर चन्द्रकान्त मणि-पात्र में अमृतमय जल भर कर दोनों सरकार को न्यौछावर करके अपने ही पी गयी ॥ ४७५ ॥

सुरत्न कुंजान्तर तल्पकस्थौवितेन तुस्तौ सखिरूपतानम् ।
गायन्ति श्रृङ्गाररसरूपपानमत्ताश्चरामाः मुख चन्द्रकामाः ॥ ४७६ ॥

अर्थ :—हे सखि ! युगल सरकार के मुखचन्द्र रूपी सुधारस पान लुब्धा सखियों ने एक सुन्दर रत्नमय कुञ्ज में रूप के वित्तान तान कर पर्यंक पर दोनों को बैठा कर श्रृङ्गार रस के रूप को पान करने में मत्तवाली सखियाँ गाने लगीं ॥ ४७६ ॥

ताम्बूलकान्तिः सखि हासकान्ति निरीक्षणं चाप्यलकाभिरामम् ।
कपोल युग्मं ललिताधरं च नारी मनो विह्वलतां नयन्ति ॥ ४७७ ॥

अर्थ :—हे सखि ! पान के रंग से रंजित प्रीतम के अधर और मन्द मुस्क्यानयुक्त कटाक्षों से तथा अत्यन्त सुन्दर अलकावलियों के दोनों कपोलों में बिखरने से जो शोभा की आभा फैली है उससे नारि समूह विह्वल हो जाता है ॥ ४७७ ॥

विनिर्ममेत्यद्भुतरूपमाधुरीं श्रीजानकी चारुतनावगाधाम् ।
विरंचिनातां प्रपिबन्नयाति तृप्तिमहात्मानृपजोऽनिमेषः ॥ ४७८ ॥

अर्थ :—श्री जानकीजी के सुन्दर श्रीविग्रह में अगाध अद्भुत रूप माधुरी को विधाता ने रचा है । महात्मा श्री चक्रवर्ति कुमार इस रूप माधुरी को अनिमेष नेत्रों से पीते हुए कभी भी तृप्त नहीं होते हैं ॥ ४७८ ॥

सव्यंगुलिभ्यां चिबुकं गृहीत्वा चुचुम्ब गण्डेन नियुज्यगण्डम् ।
नतृप्तिमेतिभ्रमरेवकामं रामाप्रियस्तामरसं सुशारवम् ॥ ४७९ ॥

अर्थ :—हे सखि ! रमणियों के प्रिय ये श्री प्रीतमजी श्री प्रियाजी को अपनी गोद में बिठाकर दो अंगुली से चिबुक पकड़ कर कपोल से कपोल मिलाकर चूमते हुए

जैसे कमल के दल में बैठा हुआ भ्रमर कमल पराग से तृप्त न होता हो वैसे ही वे भी अतृप्त हैं ।। ४७९ ।। ❀ मध्याह्न शयन ❀

संश्लिष्य संश्लिष्य सरागभारा क्रान्तौ सुतल्पे पततः प्रगाढम् ।
सखीगणा स्त्वानन चन्द्रबिम्बौ पश्यन्मुखं चानुभवन्ति नित्यम् ।।४८०।।

अर्थ :—अत्यन्त गाढ सुन्दर अनुराग के भार से आक्रान्त दोनों सरकार परस्पर प्रगाढ़ आलिंगन करते हुए सुन्दर पर्यंक में शयन कर गये तो यह मुखचन्द्र बिम्ब की झाँकी को सखि समाज नित्य अनुभव करती हुई मुखचन्द्र को देखती रहती हैं ।। ४८० ।।

इत्थंकुमारौ सखि मानयन्तौ परस्परं स्नेह रसप्रवीणौ ।
कण्ठन्निगृह्याधरपानमत्तौ बभुवतुः प्रीतिरसप्रवाहात ।। ४८१ ।।

अर्थ :—हे सखि ! स्नेह रस में प्रवीण एक दूसरे का आदर करते हुए दोनों कुमार इस प्रकार परस्पर कंठ से लगे हुए प्रीति रस प्रवाह से अधर पान में मत्त हो गये ।। ४८१ ।।

उद्गाढ़ कन्दर्प सुखम्बबर्ध प्रसून शैय्योपरि राजसूनुः ।
प्रीतिं स्वरूपंच धरात्मजायां सख्यः मरार्ता मुमुहुर्निरीक्ष्य ।। ४८२ ।।

अर्थ :— श्री महाराज कुमारजी पुष्प शैय्या पर अपने अनुराग और स्वरूप को और मनोज सुख को भूमिजा श्री सीताजी में अतिशय प्रगाढ़ता पूर्वक बढ़ाये, सखियाँ युगल सरकार के प्रेम विहार को देख कर स्मर से आर्त होकर मोहित हो गयीं ।। ४८२ ।।

रामं स्नेह पयोनिधि विधिमत्तां सीमावधिश्री निधिं,
सीतां रूप समुद्र मन्जु लहरी संवीक्ष्य चेतो हरीम् ।
मंत्र स्वौषधि यन्त्र तन्त्र निचयान् रामा बदंधुहृ शो,
दोषोद्भूत भयेन चारुचकितं संसद्दुकूलं मुहुः ।। ४८३ ।।

अर्थ :—स्नेह के समुद्र विधाताओं के विधि के परा सीमा (रहस्य और मर्यादा में परस्पर विरोध होने पर भी अचिन्त्य कर्मा श्री रामजी में दोनों की परासीमा पूर्ण है ।) ऐसे श्री रामजी अनन्त श्रीयों को रमाने वाले अनन्त श्रीयों की भी श्री सीताजी के रूप समुद्र में निर्मल लहरों को देख कर श्री रामजी का चित्त हरण हो गया । अर्थात् दोनों सरकार का स्नेह समुद्र लहर लेने लगा तो सखि समाज दृष्टि दोष न लग जाये, इस भय से मंत्र पढ़कर झाड़ने लगी । राईलोन उतारना आदि अनेक औषधियाँ करने लगीं । यन्त्र बाँध कर तन्त्र तोटकादि विधि करके दर्शन करने लगी । जिसमें स्वयं सात्विक दशाओं से शिथिल हो गयीं, तब उनके अंग वस्त्र भी ढ़ीले पड़ गये ।। ४८३ ।।

भातस्तौ सुषमा सरस्युपचितौ नूतनौ मधुश्राविणौ,

कंजौ पीत सुनीलकौ सुघनितौ नेत्रालि पीतौसदा ।

प्रीत्यातच्छ्रबयो रतोत्सव रस स्नेहास्पदानि क्रमा,

रचक्राते बनिते रसालसदृशा वाक्यानि पश्यन् मुहुः ॥ ४८४ ॥

अर्थ :—परम शोभा के सरोवर में अमृतमय मधुर रस की वर्षा करने वाले, नूतन नील पीत दो कमल स्वरूप दोनों सरकार अत्यन्त प्रकाशित हो रहे हैं। सखिवृन्द के नेत्र रूपी भ्रमर गण इस शोभा रूपी अमृत को अत्यन्त अनुराग पूर्वक निरन्तर पान करते हैं। हे बनिते ! बिलासोत्सव के स्नेह रस बर्धक क्रमशः अनेक प्रकार की स्नेहयुक्त बातें दोनों सरकार करते हैं। उनकी स्नेह रसपूर्ण बाणि को सुनकर और रूप को अवलोकन कर सखियाँ बारम्बार आनन्दित होती हैं ॥ ४८४ ॥

काचित्सौरभलुब्ध नर्तित रणद् भृङ्गालकान् साधयन् ,

मोदं कौसुम सौकुमार्य सुवपुः प्रायोत्तमांगं स्पृशन् ।

प्रायो नारि मुखैः सदा परिभवम्प्राप्त नभा मण्डल,

माश्रायि स्फुटमत्पलैः सचिवतां चन्द्रेनवतु समम् ॥ ४८५ ॥

अर्थ :—कोई पुष्प की सुकुमारता से भा ति कोमल अंग वाली सखी युगल सरकार के उत्तम अंग मस्तक का स्पर्श करती हुई सुगन्ध लुब्धा, भ्रमर सदृश नृत्य करने वाले चिक्कन चमकीले घुंघराले काले अलकों को सुधारती हुई परमानन्दित हो रही है। कबि इस दृश्य को देख उत्प्रेक्षा करते हैं कि प्रायः इन्हीं नारियों के मुख चन्द्र की शोभा से पराजित होकर ही चन्द्रमा ने आकाश का आश्रमण किया है। परन्तु आज कुमुदों ने चन्द्रमा के साथ मंत्रि पना करने का बिचार किया है, यह स्पष्ट है। यहाँ युगल सरकार का मुख चन्द्र है सखियों के हाथ कुमुद है मुख के बालों को सुधारना ही मित्रता करना है ॥ ४८५ ॥

काचित्पीन पयोधरा सुकुसुमैर्नद्धं मृगाङ्क द्युतिं,

चक्रेऽन्या व्यजनं मयूर सुशिखंडोत्फुल्ल गुच्छेनतौ ।

सेवन्ति मुदमाप दम्पति तड़िन् मेघं निरीक्ष्यालि किं

बर्हीं नृत्यति मानसे किमथवा हंसः प्रमत्तः किल ॥ ४८६ ॥

अर्थ :—कोई पुष्ट उराज वाली सखी पुष्प-व्यजन (जो चन्द्रमा सदृश प्रकाशमान है) को लेकर दोनों सरकार को हवा कर रही है। और कोई सखी मयूर पंख के बने हुये मूर्छल कर रही है। इस दृश्य पर कबि की उत्प्रेक्षा है कि क्या बिजली संयुक्त बादल को देख कर मोर नृत्य कर रहा है और मान सरोवर में मत्त होकर हंस कैसे सुन्दर नृत्य कर रहा है। पुष्पव्यजन हंस व मूर्छल मोर है ॥ ४८६ ॥

काचिच्चकोर तरुणी नयना मुखेन्दु

जोत्सनां पपौ द्युति चयेनपुपूर कुञ्जम् ।

तत्पाणि पंकजयुगं कुचयोर्दधार काचिच्चचुम्ब

कमलानि मिथः किमब्जः ॥ ४८७ ॥

अर्थ :—कोई चकोर सदृश नेत्रवाली तरूणी सम्पूर्ण कुञ्ज को प्रकाश करने वाले युगल सरकार के मुखचन्द्र की शोभा रूप ज्योति को पी रही है और युगल सरकार के कर कमलों को अपने हृदय से लगा कर आनन्द से चूम रही है मानो दो कमल आपस में मिल रहे हों ॥ ४८७ ॥

काचिन्निरीक्ष्य मदनस्य विवृद्ध खड्गं सौख्यालयं
सकललोक मदान्वितानाम् ।
स्तब्धाजड़ा मूकतयैव जाता सुविह्वला तीव्र प्रयातु कामा । ४८८ ॥

अर्थ :—किसी सखी ने मदन की बढ़ी हुई तलवार को देखा, जो आनन्द मदमत्त सकललोक के सुख स्थान है। उसे देख कर अपने मनोरथ को पूर्ण करके विह्वल होकर जड़वत् होकर स्तब्ध हो गयी ॥ ४८८ ॥

उत्कंठिता रतिपदे विदधार पादौ स्विन्नाननां पुलककम्पित गात्रयष्टिः ।
तद्रूप लावण्यसुधोदधिके सुमीनी काचिद्भुवनमिच्छति पारनाशे॥४८९॥

अर्थ :—कोई उत्कंठिता सखी के रति पद में प्रीतम चरण धर दिये तो वह पसीने से तर बतर और रोमांचित तथा स्तम्भित हो गयी। प्रीतम के रूप सौन्दर्य अमृत सागर की मछली बनी हुई वह उस छवि समुद्र से पार न जा सकी। अर्थात् उस छवि समुद्र से पार जाने की इच्छा नहीं की, शोभा समुद्र में डूब गयी ॥४८९॥

लावण्यतामृतपयोनिधि जातचन्द्रं द्वंद्वंभजेरतिरतं शयनाभिरामम् ।
द्राक्ष्यासुदाडिमसुकन्द मयंसुपेयंनानाविधं पपतुरालि रसाप्तकामौ ।४९०॥

अर्थ :— हे आलि ! लावण्यतारूपी अमृत पयोनिधि से उत्पन्न हुए दो चन्द्रमा को अति सुन्दर पर्यंक पर रति विलासासक्ति में आशक्त हुए जानकर रस प्राप्ति की कामना से मुन्नका, अनार, मिश्री कन्द मय अनेक प्रकार के पेय रसों को पिलाते पीते हुए दोनों प्रिया प्रीतम को मैं भजती हूँ ॥ ४९० ॥

॥ मध्यान शयनोत्तर उत्थान शृङ्गार की झाँकी ॥

कापिददौ मुख बीटिकां सरसां रमणी शुचि भूलाम् ।
चारूददर्श तयोरधर द्वयमालि मनोभव शूलम् ॥ ४९१ ॥

अर्थ :—पवित्रता की मूल अत्यन्त रसीले पान बीड़ा को किसी रमणी ने युगल सरकार के मुख में दिया तो हे आलि, मनोभव शुलसम दोनों प्रियों के अधर-ओष्ट की कामोदीपक लालिमा को सुन्दरता से देखा॥ ४९१ ॥

चित्र सुगन्ध भरेण शिखां रति मिवा कलितां ताम् ।
चन्द्रस्फुट पात्रधृता सुघुसा शुचि राग मयि ताम् ॥ ४९२ ॥

अर्थ :—श्री प्रियाजी के शिर के सुगन्धपूर्ण चोटी जिसको अनेक अलंकारों से अलंकृत किया गया है उसकी सखिने रति की चोटी के सदृश रचना की और माँग में सिन्दुर भर दिया तो मानो चन्द्रमा के पात्र में परम पवित्र परम शोभा

को रख दिया अथवा प्रीतम के पवित्र अनुराग को भर दिया हो ॥ ४९२ ॥

॥ अपराह्नकालिक वन विहार ॥

कदा पक्षिव्रातैः समर सरसा रूढ़ हृदयौ

कदाचित्तौ द्यूत मजजय रसासक्त मनसौ ।

कदाचित्क्रीड़न्तौ कुसुमकृतसौ कन्दुकचये

स्खलन्ति कान्ता सा चपल मवला कान्त मजयत् ॥४९३॥

अर्थ :—दोनों सरकार किसी समय अनेक प्रकार के पक्षि समूहों का अत्यन्त रसमय युद्ध देख रहे हैं और कभी परस्पर एक दूसरे को जीतने के इच्छा से द्यूतासक्त हो रहे हैं और कभी फूलगेन्दों से युद्ध कीड़ा करते हुए अत्यन्त चञ्चल श्री प्रीतम को महान प्रकाशवती अत्यन्त चंचला प्रिया ने जीत लिया ॥ ४९३ ॥

सुगौरांगानां सा सुतनु सुषमा दिक्षु विशति,

नजाने विद्युद्वा कनक निचयं मार रचितम् ।

प्रिये यन्त्रं किम्वा कथय यदि जानासि कुशले

स्मर भ्रान्ता सा तज्ज्वलमव लम्बेति वदति ॥ ४९४ ॥

अर्थ :—समस्त गौरांगी सखियों के बीच में सुन्दर विग्रहवाली श्री प्रियाजी के श्री विग्रह की वह परम शोभा दशों दिशाओं में प्रवेश कर गयी । कोई देखनेवाली सखी कहती है कि अहो दिशाओं में परम शोभा का प्रकाश क्या कामदेव का रचना किया हुआ सुवर्ण का ढेर है ? अथवा बिजली का पुञ्ज है, किंवा कोई काम का यन्त्र है ? हे प्रिये तुम कुशला हो यदि तुम जानती हो तो बताओ । इतना कहते ही वह सखी कामदेव के भ्रम से उस बिखरी हुई विचित्र शोभा ज्वाला को पकड़ने लगी । अर्थात प्रियाजी की कन्दुक-क्रीड़ा के चमत्कार ने सभी को चकाचौंध कर दिया ॥ ४९४ ॥

निरीक्ष्य स्विन्न स्वानन सरसिजं लोल नयनां

स्वधारांके पश्यन् मुख मुरसि हस्तं समदधत् ।

विलेपं शंके केशर जनित मिन्दौ सम करोत्,

सुमुक्ताभिः पूजां कुसुमशर कान्तां सपत्निकाम् ॥ ४९५ ॥

अर्थ :—श्री प्रियाजी के मुख कमल में पसीने के कणों को देख कर फिर भी कन्दुक क्रीड़ा में चपलता को देख कर श्री प्रीतम ने प्रियाजी को पकड़ कर गोद में बैठा कर पसीना को पोंछ दिया और मुखचन्द्र को देखते हुए केशर चन्दनादि को लेकर प्रियाजी के उरस्थल में हाथ रख कर चित्रों की रचना की और मुखचन्द्र में भी मोती मणियों आदि से सुन्दर श्रृंगार किया मानो यह चन्द्रमा के ऊपर कामदेव अपनी कान्ता की अनुकूलता के लिए पूजा कर रहा हो ॥ ४९५ ॥

विलेपकपूर रसं सुशीतं सचन्दनं वाम मनोज रम्यम् ।
नीलोत्पलानां व्यजनं विधाय चकार कान्ता मुखपानमतः ॥ ४६६ ॥

अर्थ :—काम से भी अति सुन्दर कपूर रस सुन्दर शीतल चन्दन श्री प्रियाजी के श्री विग्रह में लेपन कर प्रियाजी के मुख कमल की सुगन्ध के मतवाले भ्रमर श्री प्रीतमजी ने नील कमल के व्यजन बनाकर अपने अंक में बिठा कर प्रियाजी को पंखा कर रहे हैं ॥ ४९६ ॥

अपश्यतामाननचन्द्र युग्मं कदापि तावेक सुदर्पणस्थम् ।
परस्परंस्नेह रसं निरीक्ष्य नवंनवं भावमबन्धयेताम् ॥ ४६७ ॥

अर्थ :—किसी समय दोनों सरकार सुन्दर दर्पण में अपने दोनों मुख चन्द को देखने लगे परस्पर स्नेह रस में नये-नये भावों द्वारा बंधे हुए एक दूसरे को देख रहे हैं ॥ ४९७ ॥

तनुं न संस्मार निपीय रूप सुमाधुरीं स्नेहवशः कदाचित ।
विरच्य कान्तौचित् पुष्पशय्यां प्रस्थापयामास च तत्र सीताम् ॥ ४६८ ॥

अर्थ :—कभी स्नेह के अधीन होकर रूप सौन्दर्य माधुरी को पीते हुए शरीर की दशा को भूल जाते हैं, कभी फूलों को उचित शैय्या बना कर उस पर श्री सीता जी को विराजमान करा कर श्री प्रीतम परमानन्दित होते हैं ॥ ४९८ ॥

मुखेन्दुमालोक्य ववध कामं नरेन्द्र सूनुः सखि राग सिन्धुः ।
पपौ कदाचित् रसराजसिन्धु स्तदाननेन्दु रतिवृद्धिमत्तः ॥ ४६६ ॥

अर्थ :—हे सखि ! अनुराग-समुद्र श्री प्रीतमजी ने शृंगार के समुद्र श्री प्रियाजी के मुखचन्द्र का दर्शन कर अनुराग बढ़ाने में अत्यन्त मतवाले होकर विविध विलास के मनोरथों को बढ़ाया । और श्री प्रियाजी के मुख सुधा का रसास्वादन किया ॥ ४९९ ॥

रामः कदाचि च्चिबुके निधायांगुलिं मुखं पश्यति तन्मुखेन्दुम् ।
अंक निधायालि चकार वेषं तस्याः पुनः पश्यति रूप लक्ष्मीम् ॥ ५०० ॥

अर्थ :—हे आलि, कभी श्री प्रीतम अपनी हस्तांगुलियों से प्रियाजी के चिबुक को पकड़ कर किशोरीजी के मुखचन्द्र के दर्पण सदृश कपोलों में अपने मुख को देखते हैं और कभी फिर श्रृङ्गार कर अपनी गोद में बिठा कर उनकी रूप शोभा को अवलोकन करते हैं ॥ ५०० ॥

अत्यद्भुतान्यालि सुभूषणानि चित्राणि रम्याणि यथा स्थितानि ।
तथापि संसाधयति प्रियोसौ कलानिधि श्चित्रनिधिः कदाचित ॥५०१॥

अर्थ :—हे आलि, कभी श्री किशोरीजी के अत्यन्त अद्भुत चित्र विचित्र रमणीय भूषण यद्यपि अपने स्थान पर ठीक हैं तो भी कलानिधि चित्रकारियों के पंडित नये प्रीतमजी सुधारते रहते हैं ॥ ५०१ ॥

दूरी करोति भ्रमरान् कदाचित् करोति शीतं पवनं कदाचित् ।
सुवीटिका मामन पंकजे च ददाति बिम्बाधर मालि पश्यन् ॥ ५०२ ॥
अर्थ :—हे आलि, ये श्री प्रीतम कभी श्री प्रियाजी के मुख कमल की सुगन्ध के लोभी भंवरों को भगाते हैं और कभी व्यजन से शीतल हवा करते हैं और कभी पान बीड़ा प्रेम पूर्वक चबाते हैं और बिम्बा सदृश लाल अधर को अति स्नेह पूर्वक देखते हैं ॥ ५०२ ॥

दधाति सीता सखि पाद पद्मं तन्मार्गमा सोधति लोल नेत्र ।
सखीषु रागं रसिकाग्रगामी रसर्द्धि मार्धिः किल तासु कुर्वन ॥ ५०३ ॥
अर्थ :—हे सखि, रसिक शिरोमणि श्री प्रीतमजी सखियों में रस का भाव बढ़ाते हुए चञ्चल नेत्र से श्री प्रियाजी जिस मार्ग से चरण कमलों को धरती हैं उस मार्ग में बिछाये हुए फूलों को हाथ से स्पर्श करते हैं कि कहीं प्रियाजी के चरणों में ये पुष्प पंखुड़ी न चुभ जाय ॥ ५०३ ॥

सीता यदागच्छति पद्म पद्भ्यां मन्दद्युतिर्भातिसरोरुहाणाम् ।
पादाब्ज रेणुं हृदये दधाति नेत्राञ्जनं तां चकरोति रागात् ॥ ५०४ ॥
अर्थ—जिस समय श्री प्रियाजी कमल पांवड़े पर चरण रख कर चलती हैं तो चरण प्रकाश के आगे कमलों का प्रकाश मन्द हो जाता है । श्री प्रीतमजी श्री प्रियाजी के पाद-पद्मों से रंजित पद्म रेणु को हृदय से लगाते हैं और अनुराग से नेत्रों के अंजन बनाते हैं ॥ ५०४ ॥

॥ रास रहस्योत्सव ॥

गन्धर्व राजार्भक चारु वेषा यदा कलं गायति राजपुत्री ।
गन्धर्व दर्पोन्मथनेन साकं स्वांशो परिन्यस्त भुजेन तेन ॥ ५०५ ॥
अर्थ—जिस समय राजपुत्री श्री सियाजु गन्धर्वराज कुमारियों के सदृश सुन्दर श्रृङ्गार कर के गन्धर्वों के घमण्ड को मन्थन करने वाले श्री प्रीतमजी के साथ गलबाँही देकर और उनकी भुजा को अपनी गलबाँही में देकर सुन्दर राग रागनियों के साथ गाती है ॥ ५०५ ॥

गायन्ति नृत्यन्ति श्रमं त्यजन्ति द्रवन्ति मुह्यन्ति समाश्लिषन्ति ।
गायन्ति भृङ्गा मुनयः शिवश्च ध्यानं शिलाः अंकुरिता व्रततयः ॥ ५०६ ॥
अर्थ—और गान करती हुई नृत्य भी करती है और मध्य-मध्य में श्रम को त्याग करते हुए परस्पर स्नेह से द्रवित होकर आलिंगन करते हैं एक दूसरे के सौन्दर्य से मोहित होते हैं तो उस समय का, आप दोनों के अनुरागपूर्ण दृश्य को मुनि लोग भ्रमर बन कर इस प्रकार गान करते हैं । और शिवजी भी इस दृश्य में ध्यान मग्न हो जाते हैं । पहाड़ पत्थर भी द्रवित हो जाते हैं और बन-लता वृक्ष अंकुरित हो जाते हैं ॥ ५०६ ॥

वीणा मृदङ्गानक झर्झरीणां सपादविक्षेपण नूपुराणाम् ।
सतालगीतस्वर मण्डलानां विरजेतुस्तौ कृतमण्डलानाम् ॥ ५०७ ॥

अर्थ—दोनों सरकार के इस संगीत मण्डल में सखियों के समाज में से कोई बीणा, मृदंग, दुन्दुभी, झर झर आदि वाद्य वादन यन्त्रों को लेकर नूपुरों के सुन्दर पाद विक्षेप और गीत के राग भेदों से स्वर के मण्डल बाँधकर नृत्य कर रही हैं इस प्रकार दोनों सरकार रास मण्डल के बीच में गलबाँही दिये हुए अति शोभित हो रहे हैं ।। ५०७ ।।

नृत्यश्रमाञ्चित मुखेन्दु प्रफुल्लिताना—

माळाप लाप रचनैक कलान्विताना ।

चक्राकृति भँवर चन्द्रकला पराणा

माभाति रास सुषमा सखि पङ्कजाभा ।। ५०८ ।।

अर्थ—हे सखि । यह श्री युगल सरकार का रास मण्डल गोल चक्राकार होने से इस रास की परम शोभा कमलाकार है, जैसे अमृत समुद्र में चक्राकार भँवर पड़ गया हो अथवा चन्द्र मण्डल में से किरण छिटक रहे हो ताल स्वर के साथ आलाप लेते हुए बीच-बीच में बातों की रचना—ताथै-२ तत्ताथेइ बीच-बीच में कोई भी रहस्य का शब्द बोल देना इस रचना में एक अद्वितीय कला निपुणा सखिया यद्यपि नृत्य के परिश्रम से पसीना युक्त मुख चन्द्रवती हैं तौभी उत्साह से मुख कमल सदृश खिला है ।। ५०८ ।।

गन्धर्व संगीत कलास्वभिज्ञौ गन्धर्व राजार्भक तुल्य वेषौ ।

संगीत कीर्तीश्वर पूज्य पादौ विहार नृत्यौत्सुक मंजु विग्रहौ ।। ५०९ ।।

अर्थ—गन्धर्व संगीत कला के अत्यन्त मर्मज्ञ गन्धर्व राजकुमारों सदृश भेष बनाये हुये और संगीत मर्मज्ञों के ईश्वरों से पूजित श्री चरण श्री युगल सरकार इस वक्त अपने दिव्य श्री विग्रहों से नृत्य विहार में अति उत्सुक हो रहे हैं ।। ५०९ ।।

इत्थंसनाना विधि रास कुन्जे कृत्वा विहारान्पुलिने खरटथा: ।

करे गृहीत्वा मिथिलेन्द्र पुत्र्याः पुनर्ययौ स्वात्म सुखैक तृप्तः ।। ५१० ।।

अर्थ—इस प्रकार श्री सयूँ तटस्थ विविध रास कुंज वनों में अनेक प्रकार से रास विहारों को करके फिर श्री मिथिलेन्द्रराजपुत्रीजी का हाथ पकड़ कर अपने निजी स्वतन्त्र ऐश्वर्य मय स्वतन्त्र भोग में तृप्त रहने वाले श्री कनक भवन ब्रह्मधाम में चले ।। ५१० ।।

यत्रानंगवनं सुविस्तृत महामोदप्रदं कानन,

कन्दर्पोद्दर धुर्यभूभृत भृतं भास्वत्सु शृंगान्वितम ।

कृत्वा कौतुक तत्र केलि कलितं कामप्रदं कामिनं ।

दिव्यानन्त गुणोदधी रघुपतिः श्रीदक्षिणो नायकः ।। ५११ ।।

इतिश्रीरामानन्द सम्प्रदायस्थ श्रीपैहारी कृष्णदास वन्शोद्भव श्रीगालवाश्रम गाद्याधिपति मधुर रसाचार्य अनन्त श्री सम्पन्न श्रीरामप्रपन्नाचार्य जी प्रणीत नाम श्रीमाधुर्यकेलि कादम्बिनी सम्पूर्णम । शुभम ।।

अर्थ—इस प्रकार नित्य नये-नये विलासों को नये-नये ढङ्ग से नये-नये स्थानों में करते हैं अतः एक वन से दूसरे वन प्रतिमास प्रतिवर्ष प्रतिरुचि का विस्तार लीलाओं के भेद से अनन्तता है यद्यपि दिव्यधाम साकेत के बारह वन मुख्य जो शास्त्रों में विस्तार वर्णित हैं परन्तु यहाँ पर आचार्य एक वन से दूसरे वन जाने का इसारा मात्र कर रहे हैं—जहाँ अनंग नामक वन है, जिसमें अतिशय विस्तार महाआनन्ददायक वन है। जिस वन में अतिशय प्रकाशमान अनन्त शिखर वाला पर्वत है जिस पर्वत में अनन्त कामदेवों का उद्धार करने वाले कामदेवों के धूरी महाराज कुमार श्रीराम विहार करते हैं समस्त कामियों की सम्पूर्ण कामनाओं को देनेवाला रासकेलि शब्द से कथित कौतुक उस पर्वत व वनमें करके अनन्त दिव्य गुण सागर अनन्तश्रियों को रमानेवाले दक्षिण नायक श्रीरघुपति का स्मरण करना चाहिये सब मनोरथ पूर्ण हो जायेंगे ॥ ५११ ॥

इति श्रीसीताराम रसरसिक श्रीरामानन्दाचार्य श्रीचरणानुजीवी आचार्य परम्परा तत्वान्वेषी भ्रमरानुचर श्रीजानकीघाट श्रीचारुशीला बागान्तर श्रीचारुशीला मन्दिर निवासी जानकीशरण मधुकर कृता रसिक भ्रमर भोजिका टीका सम्पूर्णम् । शुभम् ।

शुद्धाशुद्धी पत्र

पृष्ट—१

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	जाणो	जानी
१	पाणी	पानी
३	लोकबाद्य	लोकबाह्य

पृष्ट—२

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२	शिप्यहो	शिष्यहो
३	हा	होतोतव
९	पुण्ड्मुद्रा	पुण्ड्ं मुद्रा
९	मन्ताश्च	मन्त्रश्च
११	अकारन्तय	अकारत्रय
१२	अकारन्तय	अकारत्रय
१३	जीवत्मा	जीवात्मा
१५	रक्षल	रक्षक
१६	कार्यण्य	कार्पण्य

पृष्ट—३

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२१	मोग	भोग
२२	व	मात्रं
२३	व्याबार	व्यापार
२७	का हक है	करने को हकदार है

पृष्ठ—४

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१४	पदेनामौ	पदेनासौ
१४	ब्रह्म	ब्रह्मा
१५	भिधयिते	भिधीयते
१५	उपनिबद	उपनिषद
२२	रागिनः	रगिनः
२३	दग्या	दग्प्रा
२६	की	कीर्ती

पृष्ट—५

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	श्री महाबात्मी	श्री महात्मी
९	सर्वलीक	सवंलोक
२४	अश्रद्धधानाः	अश्रद्दधानाः

पृष्ट—६

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८	हं	हूँ
९	प्ररण्हा	प्रेरणा
१६	प्रकशमान	प्रकाशमान
२	जान	ज्ञान
२२	रहित समी	रहित आत्मा समी
२५	दशन	दर्शन

पृष्ट—७

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२	ह्मातम	ह्यात्म
२१	जन्नों	जन्मों
२६	अर्थात शरौर	अर्थात शरीर

पृष्ट—८

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६	अश्रद्धधानाः	अश्रद्दधानाः
७	वलीनी	वर्त्मनि
२२	भमवान	भगवान

पृष्ट—९

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१०	शक्ति	भक्ति
१६	पायोर्गस्त	पायोऽस्ति
२३	बरेयम्	वरोयम्

पृष्ट—१०

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७	भं	भर्षं
१६	सीतापति	सीतापतिं
२०	मध्व	मध्य
२५	ब्रवीत	ब्रवीति
२६	परोडपि	परोऽपि
२७	मोचेत्	नोचेत

पृष्ट-११

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१३	कीक	कोक
१४	परमी	परमो
१६	गायन	गायन्
२६	शोभाथ	शोभाय

पृष्ट—१२

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	इलश्चोति	इलश्चेति
११	धम्	धन्
१२	कृदन्तरबत्	कृदन्तवात्
१९	सखि	सखी
२४	भुमति	भ्रमति

पृष्ट—१३

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	भृङ्गयः	भृंग्यंः

पंक्ति — अशुद्ध — शुद्ध

३ निर्मन्कन्तीन्दु— निर्मन्क्षतीन्दु

९ रघुनाथकस्य — रघनायकस्य

९ मौहनम् -- मौहनम्

१० सख्या: — सख्यः

२१ दम्पति — दम्पती

२२ तो — तौ

२४ मन्णीद्र — मणीन्द्र

पृष्ठ—१४

१ क्लेश्रित — क्लेशित

२ कामदेव — कामदेवहों

५ निवह — निवहं

७ स्वाधिकं — स्वधिकं

७ चें त — चेत्

२१ नहीं — नहिआवै

२३ विभ्रक्षिता —विभ्रंशिता

२५ बायुबबौ —वायुर्ववौ

पृष्ठ — १५

१० कुर्वन्ते — कुर्वते

२२ नौयाति — नौयाति

२४ ण्यन्थ — ण्यन्य

पृष्ठ—१६

१७ लाखां — लाखों

२२ झरन झरन—झरन् झरन्

२३ सरितासु—मरितासु

२३ तासु — तासु

पृष्ठ—१७

७ सहसा — स्सहसा

१४ नोच्यकै— नोच्चकै

१७ भवेप्रस— भवेद्रस

१९ कहता है—कहती है

२१ नही —नही होवै

२१ सैत्र्गणै —स्वैर्गणैः

२३ मान्थलम् —मान्यलम्

पृष्ठ—१८

२ वर्णन्—वर्षा

३ श्रषका—श्वपका

पंक्ति —अशुद्ध — शुद्ध

४ मृङ्कारका—मृङ्गारका

४ कूजदृभ्र—कूजदभ्र

९ भावयन्स्यो—भावयन्त्यो

११ महलोंकी—महलोंको

१६ सर्वे —सर्वैः

२४ किभु —किमु

पृष्ट—१९

३ क्वाङ्गैः—स्वाङ्गैः

१० षड्अङ्गदैपुप्पस्त्रक—षडङ्गादैर्पुष्पस्त्रक्

२४ तिन्तीरैकाः—तित्तिरैकाः

पृष्ट—२०

५ इयागताः—इहागताः

९ वियत्ग—विद्युद्ग

९ मूरजा —मुरजा

११ डिडिम — डिण्डिम

१५ भूताः — भुताः

पृष्ठ — २१

२ वियेत — विचेत

३ तन्त्व — तत्त्व

६ स्सहस्त्रशः—स्सहस्रशः

७ स्तांसां —स्तासां

११ णन्यद्भु— णान्यद्भु

१२ गृहीत्वौ— गृहीत्वो

पृष्ट—२२

३ मुरजैर्ख्या—मुरजैरन्या

५ को — की

९ त्यकत्वामनसिन-त्यक्त्वामनसिज

१३ कंकणाना—कंकणानां

२३ बाघ — बाद्य

२४ गानुमा—गातुमा

पृष्ट—२३

१ है — है ?

३ रघवः—राघवः

८ गुहा—ग्रहा

१२ सिञ्चित—सिश्चित

१९ पदास्य—पद्मस्य

पृष्ट — २४

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२	मौत्तिवम्	मौक्तिकम्
१०	शतैबयस्थे	शेतेबयस्ये
१०	तरु॒ल	तरुल
१५	बभज्ज	बभञ्ज

पृष्ट — २५

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६	वियव	विधव
१४	ह्दौ	ह्रदौ
२४	धुति	द्युति

पृष्ट — २६

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१६	वध्य	बध्द
१९	कलश	कलरव

पृष्ट — २७

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३	रवांगणे	खांगणे
१६	प्रतीं कका:	प्रतीकका:
१९	अंगराज	अंगराग

पृष्ठ — २८

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१३	वाण	बांण
१८	पंक्ति	पंक्तिक्षत
१९	भ्रवौच	भ्रु वौच

पृष्ट — २९

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२	नराले	न्तराले
१२	सुनु	सूनु
२१	बद्धुम्	बध्दुम्

पृष्ठ — ३०

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१८	पुलकाचितांगा	पुलकाञ्चितांगा:

पृष्ठ — ३१ व ३२

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
९	त्रिवलीं	त्रिवलीं
१०	युगंलक्षु:	युगंललक्षु:
१७	त्रितषं	नितरषं

पृष्ठ -- ३३

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२६	किमेतरतकुत	किमेतरकुत

पृष्ट — ३४

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५	मृगमृग	मृग मृंग
८	रागिनबसा	रागिन ससा:
२२	रुवस्य	रूपस्य
२३	शिर्षे	शीर्षे

पृष्ठ — ३५

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	लबण	लवणं
४	तभ्दाले	भाले
२	काश्रिन	काश्चिद
१७	कण्डुथति	कण्डूयति
१९	चुचूम्ब	चुचुम्ब
२४	पश्यिति	पश्यति

पृष्ठ — ३६

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	चन्द्रमूत	चन्द्रमूर्ते:
१०	ध्वनिताम्	ध्वनिंताम्
११	कल्याणवता	कल्याणमय
२२	परमाभ्दतं	परमाद्भुतम्

पृष्ठ — ३७

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२	विह्यल	विह्वल
५	रघुनन्दरथ	रघुनन्दनस्य
५	सुधूर्णन्	सूधूर्णन्
११	रंगाकित	रङ्गाङ्कित
१७	मृङ्गजालं	मृङ्गजालं
२३	मृगांकु:	मृगाङ्क:
२४	मनिनि	मानिनि
२७	सिद्देश	सिध्देश

पृष्ट — ३८

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६	बद्धश्चकीरे	बद्धश्चकोरे
७	शयुको	शत्रुको
१६	उद्घाटथन्	उद्घाटयन्
१७	राममप्रिय:	रामप्रिय:
२३	भाशामणि	नाशामणि
२६	तड़िब्द्ध	तड़िब्द

पृष्ठ — ३९

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
९	रामा	रामो
१०	हसन्ति	हसन्तौ
१४	कृस्य	कृत्य
१६	रसने	रसजने
२०	सतन्वा	सुतन्वा

पृष्ट — ४०

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	भीग	भोग

पृष्ठ—४०

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१२	भङ्गनि	अंङ्गानि
१२	दम्पनि	दम्पती
२०	लोकेगस्मिन	लोकेऽस्मिन्न

पृष्ठ—४१

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	रसिक	रसिकं
२	येषा	येषां
३	भक्तिब्र	भक्तिब्रं
१८	मरगये	भरगये
२५	धुति	द्युति
२६	स्सज्ञ	स्संज्ञा

पृष्ठ—४२

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२	भृग	भृंग
२	पर्चौ हंश	पर्ञ्चौ हंश
७	मथानि	ययानि
११	कुञ्जातु	कुञ्जात्तु
१२	द्यति	द्यु ति
२२	भन्ति	भान्ति
२७	धावन्ति	धावन्ति

पृष्ठ—४३

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८	रमां	रमा
८	पति	पतिं
१३	दम्पति	दम्पती

पृष्ठ—४४

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	सर्वागिया	सर्वांगिया
६	प्रवेकःरख	प्रवेकैःख
१७	मानिनी	मानिनि
१८	प्रिय	प्रियं
२६	मदतागण	प्रमदागण
२८	बिचित्रैर्वतिस्म	बिचित्रै बरतिस्म
२९	सुचोच्चै	सुचोच्चै

पृष्ठ—४५

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१९	मनिकेतोः	मीनकेतोः
२४	भङ्गा	भृङ्गा
२५	स्सुंदरी	स्सुन्दरि
२५	चिन्त	चित्तं

पृष्ठ—४६

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	रम्ये	रम्ये
८	यर्थाभ्र	यथाभ्र
१६	स्फटतर	स्फुटतर
२१	विद्यत्तिम्	विद्युतिम्
२२	ययामैं	ययामे
२४	युक्ति	युक्त
२७	सकणयो	सुकणयो
२७	मानिनी	मानिनि
२७	समीना	सुमीना
२७	धिव दर्पकस्थ	बिब दर्पकस्य

पृष्ठ—४७

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३	नरवां	नखां
३	शशाका	शशाङ्का
४	रसकीविदा	रसकोविदा
१०	सलोचना	सुलोचना
१६	सशीतां	सुशीतां
१६	ललितं	ललितां
१६	सबामं	सुवामं
२२	शशाकं	शशांकं
२२	तरीक्षे	तरिक्षे
२३	इचोडगणो	इचोड्गणो

पृष्ठ—४८

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१५	पाकरसं	पार्कं रसं

पृष्ठ—४९

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	सगन्धवारिणां	सुगन्धवारिणा
२	वेशे	केशे
७	सक्ति	सूक्ति
१६	चचकः	चचक्रुः
२२	अध	अर्घ
२४	जना	जनो
२४	स्वोंदो	स्वान्दो
३०	समरतम्	समस्तम्

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
	पृष्ठ—५०	
२	चात्र	चात्र
७	विम्ला	विमला
१०	सच्क्र	सचक्र
२०	रताड़िता	रतड़िता
२६	स्तथान्धाः	स्तथान्याः
२९	मुनका	मुनक्का
	पृष्ठ—५१	
१९	सुक्षणे	स्वीक्षणे
	पृष्ठ—५२	
३२	कान्ता	कान्त
	पृष्ठ—५३	
४	धा पटब	धातृपटव
५	सवखमत्र मषता	सर्वस्वमत्रभवता
१३	विजहुः	विजहुः
१४	पथत	मथतं
१४	रातश्चिक्र	रातीश्चक्र
२०	साधयन्	साधयन
३२	प्रसगधम	प्रसङ्ग धर्म
	पृष्ठ—५४	
६	शय्यां	शय्यां
९	सुरल	सुरत
१५	उष्णीसमस्यं	उष्णीषमस्य
१६	तद्रत्म	तद्रत्न
१६	गुच्छाम्	गुच्छम्
१७	खचित	खचितं
१९	सुखे	सुखें
२५	मीन्थलकामि	मीन्यलकानि
३३	येत्तेऽमु	येतेऽनु
३५	घयस्ये	वयस्ये
	पृष्ठ ५५	
६	भंवन	भवन्
९	मूर्तिम्	मूर्तिम्
१४	रुप	रूप
१८	ककै	ककैं
२३	मवाय	मवाप
२३	मग्दुतम	मद्भुतम्
२९	प्रादा	प्रमदा
२९	मम्मथः	मन्मथः
	पृष्ठ—५६	
१	स्खलनब	स्खलन्व
१०	थार	भार
१२	संदीव्यतः	संदीव्यतः
१३	थिखि	भिखि
१५	बनतीहैं	बनतेहैं
१८	विशोरी	किशोरी
१८	सुरम्थाः	सुरम्याः
२५	मनोम्के	मनोज्ञे
२६	जहे	जहे
३३	करमि	करोमि
	पृष्ठ—५७	
५	वीक्षय	वीक्ष्य
६	ययुः	ययुः
१३	सरूयो	सख्यो
१७	कलल	कमल
२०	रथन्	रयन्
२०	लील	लोल
	पृष्ठ—५८	
४	धयन	धयन्
१२	रति	रतिं
२३	रेजः	रेजुः
	पृष्ठ—५९	
८	मानसंत्रो	मानसंनो
१४	तरूमथ	तरूनथ
३२	नमे	नम्रे
	पृष्ठ—६०	
५	रति	इति
६	परबर्श	परपर्श

पंक्ति — अशुद्ध — शुद्ध

२५ तम्मानु — तन्मानु
३२ शयनविधंहि—शयनं विधेहि

पृष्ठ-६१

१ सड़ी—साड़ी
७ भुदके—भूदंके
७ तुशंताम—तुरांताम्
१३ कठेतवन्ध—कण्ठे ववन्ध
१३ कुचावुशोंश्याम—कुचाङ्कुशाभ्याम्
१४ मयी सुखाढी—मयींसुखार्ही
२० स्फर—स्फुर
२१ खजनु—स्वतनुं
२१ मागति प्रगना—मार रति प्रमग्ना
२६ धाथचाके—धायचाङ्के
२७ कृप्वा—कृत्वा

पृष्ठ—६२

४ अतिमय—अतिशय
७ खांके—स्वाङ्के
२० काचितु—काचित्तु
२१ सरति—सुरति
२१ नितग्वा—नितम्वा
२१ कान्तया—कान्त्या
२१ निचिथा—निचया
२८ पुजे—पुञ्जे
२८ मयूरेः—मयूरैः
३२ जघापरि—जंघोपरि

पृष्ठ—६३

६ मंकान—मंकान्न
११ भूजे—भुजे
१८ दृष्ठि—दृष्टिं
१९ पुन—पुनः
२९ शुद्ध—शुद्धं

पृष्ठ—६४

५ न्द्रसुठि—सुठि
७ कुंज—कूजन्

पंक्ति — अशुद्ध — शुद्ध

१६ मण्डप—मण्डपं
१७ इन्ध्रैः—रन्ध्रैः

पृष्ठ—६५

८ प्राणाभव—प्रणाम व

पृष्ठ—६६

४ बीजपठ—विजायठ
९ भषणै—भूषणै
१० मञ्ज—मञ्जु
२३ निस्य—नित्य

पृष्ठ—६७

२६ भवयमान—स्वयम्मान

पृष्ठ—६८

२५ त्यकत्वा—त्यक्त्वा

पृष्ठ—६९

५ सन्दर—सुन्दर
३३ रास्मः—रास्म
३४ तम्नीन—तन्मीन

पृष्ठ-७१

१० गोत—गीत
११ शिविका—शिविकां
१९ स्त्रियस्तथा—स्त्रियस्ता स्तथा
३३ मुखाभ्योरू—मुखाम्भोरू

पृष्ठ—७२

६ प्रोचा—प्रोचा
२९ पटं—पट्टं

पृष्ठ—७३

३ सुकर्णयो—सुकर्णयोः
१७ खडगः—खडगः
३० धामामि—धानानि

पृष्ठ—७४

११ स्फठ—स्फुट
१२ तड़ितधनाः—तड़िद्घना
३० रामास्तु—रामस्तु

पंक्ति — अशुद्ध — शुद्ध

पृष्ठ - ७५

४ रफरन्ति—स्फुरन्ति
२० तमौ—तनौ
२० जाल—जालः
२१ भवेन्तरि—भवेन्तारि
२५ हगदोष - हग्दोष
३१ सन्जने – साञ्जने

पृष्ठ—७६

९ दशनातु—दर्शनात्तु
१० धावम—धावन्
१५ नप्राप्नुतो—न प्राप्नुतो
२६ मैं - मे
३१ ढांका - ढांका

पृष्ठ—७७

२ मानने—स्वानने
१३ तद्ददये—तध्दद्ये

पृष्ठ—७८

२ सुवत्रते—सुवर्द्धये
२ रङ्गाः—रङ्गः
६ मूतौ—मूर्त्तौ
१७ स्त्रयंस्ते—स्त्रयस्ते
३० प्रोत्फल्ल—प्रोत्फुल्ल

पृष्ठ—७९

२ स्पृष्टवाधरित्रीं—स्पृष्ट्वाधरित्रीं
१९ कोविदा—कोविदाः
२९ रस—रसं
२९ हर्ष—हर्षं

पृष्ठ—८०

१४ लाका—लोका
२७ हास्थ—हास्य

पृष्ठ-८१

१७ थाता—याता
२७ कृत्वा—कृत्वा
२७ वालका—बालकां

पंक्ति — अशुद्ध — शुद्ध

पृष्ठ—८२

८ एक—एकं
१३ पलक—पलक
२४ चविना—च्छबिना
२४ प्रमाध—प्रमाथ

पृष्ठ—८३

८ हास्थासक्ता—हास्यशक्ता
१३ शृएवन—शृण्वन्

पृष्ठ—८४

५ धिरुढेर्नथ—धिरुढै र्नथ
७ सवरवावों—सखावों

पृष्ठ—८५

९ रुय्यके—स्त्र्यंके
२३ रम्था—रम्या
२४ गृहहन्ति— गृह्णन्ति

पृष्ठ—८६

४ विषएणा—विषण्णा
२६ हेप्रिये हेसखि—हेप्रिय हेसखे
२९ सकते है—सकती है
३० सर्ब—सर्व
३१ स्नेहतरं—स्नेहतरू
३१ सुवर्धथम्—सुवर्द्धयन्
३१ विरुमुचतो—विमुंचतो

पृष्ठ—८७

३ हृष्टवा—दृष्ट्वा
८ भंग नवा नवा—भंग नवां नवां
१३ सशीभनः—सुशोभनः
१४ मेता—मेत्ता
२६ नत्यन्ति चारचा—नृत्यन्ति चारुचा

पृष्ठ—८८

१ नृत्यनूहि—नृत्यन्हि
१५ वक्षम्थले—वक्षस्थले
१५ मज्जु—मंजु
२१ सूर्य—सूर्यं

पंक्ति — अशुद्ध — शुद्ध

३० रंक — रक्तं

३१ युघ — युध

पृष्ठ — ९०

२ महर्गि — महर्षि

३ गृहणनू — गृहूणन्

६ परांड़ — परां

१२ हलयतां — हल्यतां

१४ नानाश्च — नानाश्व

२२ प्रच्छादय — प्रच्छाद्य

२८ मर्द्धनि — मूर्द्धनि

पृष्ठ — ९१

३ मेमें — मे

७ केशरी — के शरीर

१२ यहिं — यहिं

१३ बिकषति — विकर्षति

२६ साज्जने — साञ्जने

पृष्ठ — ९२

५ गृह — गृहू

१९ दीप्स्या — दीप्त्या

पृष्ठ — ९३

५ धूने — धूते

७ चित्र — चित्रं

१४ मेधा — मेघा

१५ फुल्लताः — फुल्ल लताः

१६ रघुपति — रघुपतिं

१७ तथः — तयः

१७ सापायनाः — सोपायनाः

२६ रतान — रतान्

२६ हयन — हयन्

२६ सुकान — सुकान्

२७ निकरान — निकरान्

२७ पश्यनयो — पश्यन्ययौ

पृष्ठ — ९४

१३ द्वयजने — द्वयजने

२३ स्वाके — स्वांके

पंक्ति - अशुद्ध - शुद्ध

२५ जनोघ — जनौघ

२५ ध्वनि — ध्वनिं

३४ सम्ट्टं — सदृमं

पृष्ठ — ९५

८ ज्ञामिच — ज्ञानिच

८ राण्याःभो — राण्याभो

१२ नथना — नयना

१२ रथन्ति — रयन्ति

१० रमतान् स्मतान्

१७ ताम्बुलानि — ताम्बूलानि

१७ सुरभीन — सुरभीन्

१७ लेप — लेपं

१८ यन्त्रो — यन्त्रौ

१९ राजत्म — राजात्म

२७ मद — मद्

२८ रासनां — रास्ना

२९ गणान — गणान्

२९ तृणान — तृणान्

पृष्ठ — ९६

४ राम — रामं

१० पश्यात — पश्चात्

१४ माधुर्य — माधुर्यं

२२ विधून — विधून्

२३ तरग — तरंग

२५ मदा — मुदा

पृष्ठ — ९७

१ काम - कामं

१ तनयान — तनयान्

२ खाच्छू — खांच्छ

८ स्फठ — स्फुठ

९ मो — नो

१७ नृत्यन्ति — नृत्यन्ति

पृष्ठ — ९८

५ नार्थो — नार्यो

१३ हूर्षे — हृद्यै

पंक्ति अशुद्ध — शुद्ध

पृष्ठ — ९९

९ राच्छांदित — राच्छादित

१८ बाधैः — वाद्यैः

२१ वाधों — वाद्यों

पृष्ठ — १००

२ पीनापष्ट — पीनस्पष्ट

२ निमज्जात — निमज्जत

पृष्ठ — १०१

१ गण रथ — गणस्थ

१ निस्यम् - नित्यम्

३२ तस्स्तान — तस्स्नान

पृष्ठ — १०२

६ स्वारोप्य — स्वारोप्य

७ धान् - धान्

१२ धुत्यंग — घुत्यंग

२३ सधीक्ष्य२ — सम्बीक्ष्य२

३३ सतन्नु — सुतनु

पृष्ठ — १०३

१ मलके - भालमें

२ गुंकित — गुम्फित

३० युद्धयते — युद्धयते

पृष्ठ — १०४

१ ताता — तोता

१६ सरिच्छी - सरिच्छी

पृष्ठ — १०५

४ मौक्ति — मौक्तिक

१३ पुनरतां — पुनरतां

३० क्रतुं मुघतौ — कर्तुं मुद्यतौ

पृष्ठ — १०६

१९ जथम् — जयम्

२४ प्रिथ — प्रिय

पृष्ठ — १०७

१० कुवते — कुर्वते

१२ हँशकी — हँस करके

पंक्ति — अशुद्ध — शुद्ध

१८ रंग है — रंग की पाग है

२८ वजना — वंजना

पृष्ठ — १०८

२ मद्भुत — मद्भुतं

१३ वृक्ष्याश — वृक्ष्यांश

१४ स्वमापतत् — स्वनापतत

२४ दर्पण - दर्पणं

पृष्ठ — १०९

१ परिध — परिघ

२ निर्मिते — निर्मिते

७ ध्रवम् — ध्रुवम्

८ स्कन्ध — स्कन्ध

९ प्रीत — प्रीतम

१३ समुखि — सुमुखि

१३ सर्कम् — सबंकम्

१८ विम् — किम्

२३ धनान्तरा — घनान्तरा

२७ भतम् — मृतम्

पृष्ठ — ११०

४ स्मरो — स्मरो

५ श्रीमटा — श्रमिदा

९ विमु — किमु

२० शुताथा — सुताया

२८ रजिना निनिता: - रंजिता निर्जिताः

३४ घपि — चपि

३५ सम्वीक्षथ — सम्वीक्ष्य

पृष्ठ — १११

१० पुञ्ज — पुञ्जं

१८ भाधति — मद्यति

२८ तस्थर्मुदा — तस्थुर्मुदा

पृष्ठ — ११२

६ भ्रवल्लि — भ्रूवल्लि

१५ शुकुचा — सुकुचा

१५ धुति — द्युतिं

१७ लालाक्षी — लोलाक्षी

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१७	स्फरत	स्फुरत्
२५	शुरूप	सुरूप
३१	विघाय	विधाय

पृष्ठ-११३

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१०	जली	जलिं
२०	राम्म	रामम्
३१	सारघम्	साखम्

पृष्ठ — ११४

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३	प्रगाठम्	प्रगाढम्
१५	घरात्म	घरात्म
१५	मशर्ता	स्मरार्ता
२०	निधि	निधिं
२१	मन्जु	मञ्जु
२१	लहरी	लहरीं
२३	संसद्	संसद्

पृष्ठ — ११५

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१३	नभा	नभो
१४	मूत्पलै	मुत्पलै
१४	नधर्तुं	नर्क्तुं
२३	धुर्ति	द्युतिं
२४	चके	चक्रे
२५	तड़िन	तड़िन्
२५	क्षयालि	क्ष्यालि
२६	नत्यति	नृत्यत्ति
२७	उराज	उरोज
३३	धुत्ति	द्युत्ति

पृष्ठ — ११६

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५	खंड्गं	खड्गं
७	प्रथातु	प्रयातु
१२	भूबन	भूव वन
१७	भिगमम्	भिरामम्
१८	बामौ	कामौ
२१	मुन्नका	मुनक्का

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२४	मलाम्	मूलाम्

पृष्ठ — ११७

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४	द्यत	द्यूत
११	विशति	विशती
१२	विधुद्रा	विद्युद्वा
१२	निचय	निचयं
२४	षश्यन्	पश्यन्

पृष्ट — ११८

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२	पानमत:	पान मत्तः
१०	परस्थर	परस्पर
१७	बबध	बबर्द्ध
१७	साख	सखि
१८	ननेन्दु	ननेन्दुं
२४	अंक	अंके
२९	भूपणानि	भूषणानि

पृष्ट — ११९

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७	साधत्ति	सोधति
७	नेत्र	नेत्रः
८	कुव्न	कुर्वन्
१३	पद्भ्या	पद्भ्यां
१३	धुति	द्युति
१९	रस्यो	रसो
२०	चारूवे	चारूवेषा
३५	बिरजेतु	विरेजतु

पृष्ट — १२०

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६	भँवर	भंवर
१७	स्वमिजौ	स्वभिज्ञौ
१८	त कीर्नी	त कीर्ती
२२	रवरढवा	सरजवाः
२३	तप्तः	तृप्तः
२८	कानन	काननम्
२९	भतं	मूर्तं

मुद्रक :
श्यामसुन्दर जोगानी
कलकत्ता-७
मुद्रणालय :
हरलालका आर्ट प्रिन्टर्स
४२, पथरियाघाट स्ट्रीट,
कलकत्ता-६